Success Pana Chahte Hai . Com

पुनर्जागरण
RENAISSANCE

❐ पृष्ठभूमि

प्राय: विश्व इतिहास को 3 भागों में बांटा गया है –

1) **प्राचीन काल** – मानव सभ्यता के विकास से 5वीं शताब्दी ई. तक।

2) **मध्य काल** – 5वीं शताब्दी ई. से 14वीं शताब्दी ई. तक।

3) **आधुनिक काल** – 14वीं शताब्दी ई. से अब तक।

प्राचीन काल में मानव का जीवन सुखी व खुशहाल था। यह काल सामंती दुर्गुणों से मुक्त था तथा मनुष्य पर धर्म का प्रभाव भी कम था। प्राचीन काल को रोम तथा यूनान की उन्नति का काल भी माना जाता है। इसी काल में सुकरात, अरस्तू, प्लेटो व पाइथागोरस जैसे विद्वान हुए। किन्तु मध्य काल में रोमन साम्राज्य का विभाजन पूर्वी एवं पश्चिमी में हो गया। पूर्वी रोमन साम्राज्य की राजधानी कुस्तुनतुनिया एवं पश्चिमी रोमन साम्राज्य की राजधानी रोम थी।

मध्य युग को '**अन्धकार का युग**' कहा जाता है, क्योंकि इस काल में यूरोप में सामंती प्रथा कायम हो गई, बौद्धिक प्रगति व वैचारिक स्वतंत्रता का मार्ग अवरुद्ध हो गया, मनुष्य के जीवन पर धर्म का अत्यधिक प्रभाव स्थापित हो गया, परिणामस्वरूप लौकिक जीवन की बजाय पारलौकिक जीवन को अधिक महत्व दिया जाने लगा। आगे 14वीं से 16वीं शताब्दी के मध्य यूरोप में एक नवीन चेतना जागृत हुई, जिसने मनुष्य को मध्यकालीन अंधकार के युग से निकालकर उसे प्राचीन गौरव व आधुनिककाल की ओर प्रेरित किया। वस्तुत: इसी नवीन चेतना को पुनर्जागरण कहा जाता है।

❐ अर्थ

प्राय: यूरोपीय इतिहास के संदर्भ में 14वीं से 16वीं शताब्दी (1350 ई. –1550 ई.) के बीच का काल पुनर्जागरण काल के नाम से जाना जाता है, जिसका आरंभ इटली में हुआ और 16वीं शताब्दी तक यूरोप के कई क्षेत्रों में इसका प्रचार हो गया।

पुनर्जागरण का शाब्दिक अर्थ है – '**फिर से जागना**' किन्तु यह किसी सोए हुए व्यक्ति का निद्रा से जागना नहीं, बल्कि समस्त मानव का जागृत होना है। पुनर्जागरण में न केवल प्राचीन यूनानी एवं रोमन सभ्यता की गौरवशाली विशेषताएं, बल्कि आधुनिक युग की भी कई विशेषताएं दिखाई देती हैं। इस काल में मनुष्य में स्वतंत्र चिंतन पद्धति, आलोचनात्मक एवं अन्वेषणात्मक दृष्टिकोण का विकास हुआ। परिणामस्वरूप मनुष्य जीवन के विभिन्न पहलूओं का उन्नयन आरंभ हुआ, जो इस युग की कला, साहित्य, दर्शन एवं विज्ञान आदि क्षेत्रों में परिलक्षित होता है।

पुनर्जागरण कोई अचानक घटित घटना नहीं थी, बल्कि यह एक दीर्घकालीन प्रक्रिया का परिणाम था। वस्तुत: पुनर्जागरण कोई राजनीतिक अथवा धार्मिक आन्दोलन न होकर मानव की मनोदशा को अभिव्यक्त करता है। पुनर्जागरण काल में मानव का बौद्धिक विकास हुआ। अब वह धर्म की सीमाओं से ऊपर उठकर तर्क व बुद्धि के आधार पर सोचने लगा। परिणामस्वरूप इस काल में कुछ नवीन विशेषताएं दिखाई दी, जैसे – सामंतवाद की अवनति, धर्म के क्षेत्र में नवीन दृष्टिकोण, मानववादी सिद्धान्तों का विकास, राष्ट्रीय राज्यों का उत्थान, साहित्य, कला व विज्ञान का नया स्वरूप, भौगोलिक अन्वेषण, प्रारंभिक पूंजीवाद आदि।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

❐ पुनर्जागरण के कारण

पुनर्जागरण किसी एक घटना का परिणाम नहीं था, बल्कि यह लगभग 2 शताब्दियों के सम्मिलित मानव प्रयासों का परिणाम था। वस्तुत: इन घटनाओं का प्रादुर्भाव समय-समय पर विभिन्न देशों में हुआ, जिन्होंने शनै:शनै: पुनर्जागरण की पृष्ठभूनि तैयार की। पुनर्जागरण के लिए निम्नलिखित कारणों को उत्तरदायी माना जाता है –

- **धर्मयुद्ध**

ईसाई धर्म के पवित्र तीर्थस्थल '**जेरूशलम**' को लेकर मुसलमानों (सेलजुक तुर्कों) एवं ईसाइयों के बीच हुए युद्ध को धर्मयुद्ध (Crusade) कहा गया। यह युद्ध 11वीं से 13वीं सदी के मध्य हुआ। धर्मयुद्धों के कारण यूरोपवासियों को पूर्व के विद्वानों के साथ सम्पर्क में आने का मौका मिला, जिससे उन्हें पूर्वी देशों की तर्कशक्ति, प्रयोगपद्धति तथा वैज्ञानिक खोजों की जानकारी मिली। अरस्तू के वैज्ञानिक ग्रंथ, अरबी अंक, बीजगणित, कागज पश्चिम यूरोप में धर्मयुद्धों के माध्यम से पहुंचे। धर्मयुद्ध की असफलता के कारण पोप व चर्च की प्रतिष्ठा को आघात पहुंचा।

- **सामंतवाद का पतन**

धर्मयुद्धों ने यूरोप में सामंतवादी व्यवस्था पर चोट कर उसके पतन के मार्ग को प्रशस्त किया।

- **व्यापार-वाणिज्य का विकास**

धर्मयुद्ध के दौरान कई यूरोपीय व्यापारी जेरूशलम एवं एशिया माइनर के तटों पर बसे, परिणामस्वरूप व्यापार में वृद्धि हुई। व्यापारिक समृद्धि ने पुनर्जागरण में 4 प्रकार से सहयोग दिया –

1) यूरोपीय व्यापारी व्यापार के सिलसिले में विश्व के विभिन्न देशों में पहुंचे, जहां वे नवीन ज्ञान व विचारों से परिचित हुए। फिर जब वे अपने देश वापस लौटे, तब उन्होंने इस ज्ञान व विचारों का प्रचार अपने देश में भी किया।

2) व्यापारिक समृद्धि ने यूरोप में नवीन नगरों को जन्म दिया, जैसे – वेनिस, मिलान, फ्लोरेंस आदि। यूरोप के ये नवीन नगर व्यापर के मुख्य केन्द्र थे, जिससे वहां निरंतर विभिन्न देशों के व्यापारियों एवं यात्रियों का आना जाना बना रहा। इसके कारण विचारों का आदान-प्रदान व ज्ञान का विकास संभव हुआ।

3) व्यापारिक समृद्धि के फलस्वरूप यूरोपीय व्यापारियों के पास अत्यधिक धन संग्रहित हो गया। इससे संपत्तिशाली व्यापारिक वर्ग को भी विद्यार्जन का अवसर मिला। मध्य युग में केवल पादरियों को ही शिक्षा का अधिकार था, किन्तु अब व्यापारिक वर्ग ने भी शिक्षा प्राप्त की। परिणामस्वरूप उनमें तर्क एवं बुद्धि का विकास हुआ।

4) व्यापारिक वर्ग ने चर्च की कड़ी आलोचना की क्योंकि चर्च सूद लेने को पाप मानता था। इस प्रकार समाज में चर्च का महत्व कम होने लगा, लोगों पर से चर्च का प्रभाव हुआ, जिससे स्वतंत्र चिंतन को प्रोत्साहन मिला।

- **कुस्तुनतुनिया का पतन**

1453 ई. में तुर्कों ने पूर्वी रोमन साम्राज्य की राजधानी कुस्तुनतुनिया पर अधिकार कर लिया। कुस्तुनतुनिया पर तुर्कों के अधिकार स्थापित होने से मुख्यत: 2 प्रकार से पुनर्जागरण को प्रोत्साहन मिला –

1) वहां मौजूद बहुत से लेखक, वैज्ञानिक, दार्शनिक, कलाकार आदि इटली, फ्रांस व जर्मनी की ओर पलायन कर गए और अपने साथ वे प्राचीन यूनानी एवं रोमन ज्ञान-विज्ञान और चिंतन पद्धति भी ले गए।

2) कुस्तुनतुनिया यूरोप तथा पूर्वी देशों को जोड़ने वाली कड़ी थी और कुस्तुनतुनिया पर ऑटोमन तुर्कों का अधिकार हो जाने से यूरोपीय व्यापारियों के लिए यह मार्ग अवरुद्ध हो गया। फलत: नवीन व्यापारिक मार्गों की खोज आवश्यक हो गई। इस नई परिस्थिति के कारण अनेक खोजों ने पुनर्जागरण चेतना को फैलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

- **भौगोलिक खोजें**

पुर्तगाल एवं स्पेन के नाविकों जैसे वास्कोडिगामा, कोलम्बस आदि ने अनेक नवीन जल मार्गों की खोज की। 1486 ई. में बार्थोलोम्यू डियाज ने अफ्रीका के दक्षिणी छोर की खोज की तो 1492 ई. में कोलम्बस अमेरिकी तट पर पहुंचा। 1498 ई. में वास्कोडिगामा केप ऑफ गुड होप से होते हुए भारत के कालीकट में पहुंचा। इस भौगोलिक खोजों ने विभिन्न देशों में वैचारिक आदान-प्रदान को बढ़ावा दिया। इससे व्यक्ति की चिंतन शक्ति का विकास हुआ।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

- **कागज एवं मुद्रण प्रणाली का आविष्कार**

11वीं शताब्दी में यूरोपवासियों ने अरबों के माध्यम से कागज बनाने की कला सीखी। 15वीं शताब्दी के मध्य में जर्मनी के गुटेनबर्ग व्यक्ति ने प्रिंटिंग प्रेस का आविष्कार किया और फिर धीरे-धीरे इटली, जर्मनी, स्पेन तथा फ्रांस में इस यंत्र का प्रयोग होने लगा। इस प्रकार कागज एवं मुद्रण तकनीक के अविष्कार ने ज्ञान पर विशिष्ट लोगों के एकाधिकार को समाप्त कर दिया। '**पुस्तकों में ऐसा लिखा है**' कहकर अब जनता को गुमराह नहीं किया जा सकता था, क्योंकि अब पुस्तकें सर्वसुलभ थीं। अब बाईबिल का अनुवाद स्थानीय भाषाओं में होकर उसका मुद्रण होने लगा। केवल पादरी और धर्माचार्यों का उस पर अधिकार नहीं रहा। अब मनमाने ढंग से वे उसकी व्याख्या नहीं कर सकते थे, क्योंकि सर्वसाधारण को बाईबिल उनके समझने लायक भाषा में ही उपलब्ध हो गई थी। इस प्रकार '**सत्य सत्ता की पुत्री नहीं रह गई, अपितु काल की पुत्री हो गई थी।**'

- **मंगोल साम्राज्य का उदय**

13वीं शताब्दी में कुबलई खां ने मध्य एशिया में एक विशाल मंगोल साम्राज्य की स्थापना की थी, जिसमें रूस, पौलेंड, हंगरी शामिल थे। उसका दरबार पूर्व और पश्चिमी विद्वानों का मिलनस्थल था। मंगोल राजसभा पोप के दूतों, पेरिस, इटली तथा चीन के दस्तकारों और भारत के बौद्ध भिक्षुओं, गणितज्ञों एवं ज्योतिषाचार्यों से सुशोभित थी। प्रसिद्ध वेनिस यात्री मार्कोपोलो 1272 ई. में कुबलई खां के दरबार में आया था। यूरोप वापस लौटकर उसके मंगोल दरबार से प्राप्त ज्ञान, विज्ञान व अनुभवों को यूरोप में भी फैलाया।

यहां यह भी उल्लेखनीय है कि यूरोप को मंगोलों के सम्पर्क से ही कागज एवं मुद्रण, कुतुबनुमा तथा बारूद की सर्वप्रथम जानकारी मिली थी।

- **शिक्षा एवं साहित्य का विकास**

यूरोप के विभिन्न क्षेत्रों में विश्वविद्यालयों की स्थापना होने लगी थी। स्पेन में विश्व प्रसिद्ध कार्डोवा विश्वविद्यालय ने यूरोप में नवीन विचारों का प्रचार किया। उनके साहित्यकारों जैसे दांते (1265 ई. -1321 ई.), पेट्रार्क (1304 ई. -1374 ई.), टॉमर मूर (1478 ई. -1538 ई.) ने प्राचीन ग्रंथों का विभिन्न भाषाओं में अनुवाद कर सांस्कृतिक गौरव को पुन:स्थापित करने का प्रयास किया।

❐ इटली से ही पुनर्जागरण का सूत्रपात क्यों?

पुनर्जागरण का सूत्रपात सर्वप्रथम इटली में हुआ, फिर वहां से इसका प्रसार जर्मनी, इंग्लैण्ड, फ्रांस आदि यूरोपीय राष्ट्रों में भी हुआ। यहां यह प्रश्न उठता है कि इटली में ही पुनर्जागरण की शुरुआत क्यों हुई? वस्तुत: इटली में पुनर्जागरण के सूत्रपात हेतु निम्नलिखित कारण उत्तरदायी थे -

- **भौगोलिक स्थिति**

इटली पश्चिमी एवं पूर्वी दुनिया के मध्य भू-मध्यसागर में स्थित था। अत: पश्चिमी एवं पूर्वी दुनिया के मध्य होने वाले ज्ञान के आदान-प्रदान का सर्वाधिक लाभ इटली को प्राप्त हुआ।

- **व्यापारिक समृद्धि**

इटली की समृद्धि का कारण था - विदेशी व्यापार। भू-मध्यसागरीय देशों में सबसे अनुकूल स्थिति इटली की ही थी। यहीं से अरब व एशिया से आने वाली वस्तुएं यूरोप के अन्य देशों में पहुंचती थीं। इटली की व्यापारिक समृद्धि ने इटली में पुनर्जागरण को निम्नलिखित प्रकार से प्रोत्साहित किया -

1) इटली में व्यापारिक गतिविधियों के कारण मिलान, नेपल्स, फ्लोरेन्स, वेनिस आदि नगरों की स्थापना हुई। इन बड़े नगरों में संग्रहालयों, सार्वजनिक पुस्तकालयों, नाट्यशालाओं आदि की स्थापना संभव हुई। ग्रामीण क्षेत्रों में ऐसी संस्थाओं के विकास करने की क्षमता नहीं होती है।

2) इटली में व्यापारिक समृद्धि से एक नवीन पूंजीपति वर्ग का उदय हुआ, जिसने व्यक्तिगत स्तर पर कला, साहित्य व विज्ञान को संरक्षण दिया। इनमें दांते, पेट्रार्क, एन्जेलो, लियोनार्दो आदि प्रमुख थे। इन विद्वानों ने पुनर्जागरण चेतना का प्रसार किया। साथ ही इटली का व्यापारिक वर्ग इतना प्रभावशाली हो गया कि उसने सामंतों एवं पोप की बिना परवाह किए कई मध्यकालीन मान्यताओं का उल्लंघन किया। इससे भी इटली में पुनर्जागरण की भावना को बल मिला।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

3) इटली में व्यापार के विकास के साथ नई प्रकार की शिक्षा का विकास हुआ, जिसमें व्यावसायिक ज्ञान, भौगोलिक ज्ञान आदि को महत्व दिया गया, जिससे इटली में पुनर्जागरण की चेतना का विकास हुआ। इसके विपरीत उत्तरी यूरोपीय विश्वविद्यालयों में धर्मशास्त्रों के अध्ययन पर ही विशेष बल दिया जाता था।

- **गौरवशाली रोमन सभ्यता**

इटली के जनमानस को वहां की प्राचीन गौरवशाली रोमन सभ्यता ने भी प्रभावित किया। प्राचीन रोमन संस्कृति पुनर्जागरण का प्रेरणा स्रोत्र बनी। प्राचीन रोम जैसी महत्ता व अपने देश को गौरवशाली बनाने के विचार ने इटलीवासियों को स्वतंत्र चिंतन एवं ज्ञान के अर्जन हेतु प्रेरित किया।

- **पोप का योगदान**

इटली में रोम के '**वेटिकन**' स्थान पर पोप का निवास था, जो ईसाई जगत् का प्रधान था। कुछ पोपों ने विद्वानों, कला एवं साहित्य को संरक्षण प्रदान कर पुनर्जागरण के विकास में अपना योगदान दिया, जैसे - पोप निकोलस पंचम् (1447 ई. - 1455 ई.) ने वेटिकन पुस्तकालय एवं संत पीटर के गिरजाघर की स्थापना की।

- **उदारवादी समाज**

राजनैतिक दृष्टि से भी इटली पुनर्जागरण के लिए उपयुक्त था, क्योंकि उत्तरी इटली में स्वतंत्र नगर राज्यों का विकास हो गया था और सामंती प्रथा भी अधिक दृढ़ नहीं थी। फलत: उदारवादी एवं स्वतंत्र विचारों का विकास संभव हो सका।

- **कुस्तुनतुनिया के पतन का प्रभाव**

कुस्तुनतुनिया यूनानी विद्वानों का प्रमुख केन्द्र था। 1453 ई. में वहां तुर्की का आधिपत्य हो जाने से ये विद्वान वहां से अपने प्राचीन साहित्य की पांडुलिपि लेकर सर्वप्रथम इटालवी नगरों में आए। यहां इन नवागत विद्वानों की संख्या इतनी अधिक थी कि लगता था '**यूनान का पतन नहीं हुआ था, अपितु उसका इटली में प्रवजन हो गया था।**' इसमें से अनेक विद्वान इटली के स्कूल तथा विश्वविद्यालयों में शिक्षक नियुक्त हुए और इस वर्ग ने नवीन चेतना के प्रसार में महती भूमिका निभाई।

❐ पुनर्जागरण का स्वरूप/विशेषताएं/तत्व

- **मानवतावाद**

पुनर्जागरण की सर्वाधिक महत्वपूर्ण विशेषता मानवतावाद थी। मानवतावाद से तात्पर्य है मानव जीवन में रुचि लेना, मानव की समस्याओं का अध्ययन करना, उसके जीवन को सुधारने व उन्नत करने का प्रयास करना अर्थात् ईश्वर को नहीं, बल्कि मनुष्य को केन्द्र में रख चिन्तन करना।

पुनर्जागरण काल के चिन्तकों और विचारकों ने परलोक चिंतन की बजाय इहलोक के जीवन को आनन्दपूर्वक व्यतीत करने पर बल दिया। जीवन का लक्ष्य लोगों की भलाई के लिए काम करना बताया। पेट्रार्क (1304 ई. - 1307 ई.) को पुनर्जागरण काल का सबसे पहला मानवतावादी माना जाता है। उसने अन्धविश्वासों एवं धर्माधिकारियों के जीवन प्रणाली की खिल्ली उड़ाई। इरास्मस का नाम भी मानवतावाद के क्षेत्र में अग्रणी है।

पुनर्जागरण काल में मानववाद की अभिव्यक्ति कई रूपों में दिखाई देती है - इस काल के साहित्य में मानव की समस्याओं को प्रमुखता दी गई, ईसा को ईश्वर नहीं मानवीय रूप में परिभाषित किया गया, चित्रकला के क्षेत्र में मानव की भावनाओं और संवेदनाओं को प्रदर्शित किया गया। '**मोनालिया की मुस्कान**' इसका एक प्रमुख उदाहरण है। उसी प्रकार वैज्ञानिक खोजों का स्वरूप भी मानवीय उत्सुकताओं तथा आवश्यकताओं के परिप्रेक्ष्य में दिखाई देता है।

- **व्यक्तिवाद**

पुनर्जागरण की दूसरी महत्वपूर्ण विशेषता है - व्यक्तिवाद। इस काल में प्रत्येक व्यक्त व उसकी उपलब्धियों को महत्व प्राप्त हुआ। मध्यकालीन कलाकार एवं साहित्यकार अपनी कृतियों पर अपने नाम उल्लेख नहीं करते थे, क्योंकि वे अपनी उपलब्धियों को ईश्वर की देन मानते थे। पुनर्जागरण चेतना ने व्यक्ति को उसके महत्व से परिचित कराया और उस काल के चित्रकारों, साहित्यकारों जैसे - माइकल एंजेलो, बुकासियो आदि ने हस्ताक्षरयुक्त कृतियों को प्रस्तुत किया।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

- **धर्मनिरपेक्षता**

धर्मनिरपेक्षता से तात्पर्य है मनुष्य के जीवन पर धर्म के प्रभाव को कम करना। इस काल में मनुष्य के जीवन पर धर्म का नियंत्रण कमजोर होने लगा। अब ईश्वर व पारलौकिक जीवन की बजाए मानव व लौकिक जीवन की घटनाओं को साहित्य एवं कला की विषयवस्तु के रूप में शामिल किया जाने लगा।

- **साहसिक मनोभाव, जिज्ञासा तथा खोजी दृष्टि**

मानवतावाद और व्यक्तिवाद पर बल देने के कारण मनुष्य की जिज्ञासु और खोजी प्रवृत्ति को बढ़ावा मिला। अब व्यक्ति की उलब्धियों हेतु ईश्वर को उत्तरदायी न मानकर उसकी योग्यता एवं क्षमता को महत्व दिया जाने लगा। फलतः मानव ने साहसिक मनोभावों एवं आत्मविश्वास से युक्त होकर अनेक भौगोलिक खोजों एवं वैज्ञानिक आविष्कारों को जन्म दिया।

- **सहज सौन्दर्य की उपासना**

पुनर्जागरण की एक महत्वपूर्ण विशेषता थी – सहज सौन्दर्य की उपासना। पुनर्जागरणकालीन लोगों ने यूनानी और रोमन पूर्वजों की तरह मानव रूप का सौन्दर्य के परिप्रेक्ष्य में गुणगान किया। '**मोनालिसा**' किसी सुन्दरी अथवा राजकुमारी का चित्र नहीं है, लेकिन उस साधारण सी दिखाई पड़ने वाली महिला की रहस्यमय मुस्कान आज भी चर्चा का विषय है।

- **मध्यमवर्गीय चेतना**

पुनर्जागरण की जन्मस्थली इटली में आर्थिक समृद्धि के कारण एक नवीन मध्यम वर्ग का उदय हुआ, जिसने शिक्षा, साहित्य, कला, विज्ञान व शिक्षण संस्थाओं को प्रश्रय दिया। इस प्रकार पुनर्जागरण उद्‌भव में मध्यम वर्ग का महत्वपूर्ण योगदान रहा। अतः पुनर्जागरण को मध्यमवर्गीय चेतना का परिणाम माना जाता है। हालांकि पुनर्जागरण के उद्‌भव में मध्यम वर्ग का ही सर्वप्रमुख योगदान रहा, किन्तु इसका प्रभाव मध्यम वर्ग के साथ जनसाधारण वर्ग पर भी पड़ा।

- **बहुमुखी प्रतिभा का विकास**

पुनर्जागरण के परिणामस्वरूप बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न व्यक्तियों का विकास संभव हो सका। लियोनार्दो द विन्सी बहुमुखी प्रतिभा से युक्त एक प्रमुख व्यक्ति था। वह महान् चित्रकार के साथ-साथ एक मूर्तिकार एवं स्थापत्यकार, गणितज्ञ, दार्शनिक, वनस्पति विज्ञान का ज्ञाता, मानव शरीर का विशेषज्ञ, भूगर्भशास्त्री भी था। माइकल एन्जेलो भी चित्रकार, मूर्तिकार, इंजीनियर और कवि था।

- **तर्क बुद्धि व प्रयोग पर बल**

पुनर्जागरण काल में आस्था की जगह बौद्धिकता को महत्व दिया गया। 'मानो तब जानो' की जगह 'जानो तब मानो' पर बल दिया गया। सभी तथ्यों को तर्क की कसौटी पर कस कर देखा गया। किसी सिद्धान्त अथवा विचारधारा को सत्य प्रमाणित करने के लिए वाद-विवाद के स्थान पर प्रयोग को अधिक प्रभावी माना जाने लगा। रोजर बेकन प्रयोगात्मक खोज प्रणाली का अग्रदूत था। प्रयोगों के आधार पर गैलिलियों ने कॉपरनिकस के सिद्धान्त को अकाट्य सिद्ध कर दिया।

Shaping Your Dreams

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

❐ पुनर्जागरण की अभिव्यक्ति विभिन्न क्षेत्रों में

पुनर्जागरण चेतना की अभिव्यक्ति न केवल साहित्य, कला एवं विज्ञान, अपितु मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में हुई।

◆ *साहित्य के क्षेत्र में*

साहित्य के क्षेत्र में पुनर्जागरण काल में निम्नलिखित परिवर्तन हुए –

1) **देशी भाषाओं का विकास** – मध्यकाल में साहित्य का सृजन केवल लैटिन एवं यूनानी भाषाओं में होता था, जबकि देशी भाषाएं असभ्य मानी जाती थीं। पुनर्जागरण काल में विभिन्न देशों में अपनी-अपनी मातृ भाषाओं में भी साहित्य का सृजन किया जाने लगा, जिससे इटालवी, जर्मन, फ्रेंच, स्पेनिश, अंग्रेजी आदि भाषाओं का विकास हुआ।

2) **विषयवस्तु में परिवर्तन** – मध्यकालीन साहित्य का मुख्य विषय धर्म था। अधिकांश रचनाएं धार्मिक विषयों पर आधारित होती थीं, किन्तु पुनर्जागरण काल में लौकिक विषयों तथा मानव जीवन के क्रिया-कलापों को महत्व दिया जाने लगा।

3) **शैली में परिवर्तन** – मध्यकाल में राजाओं की प्रशंसा में दरबारी कवियों द्वारा मुख्यतः प्रशस्ति लेखन किया जाता था, किन्तु पुनर्जागरण काल में नए पदबंधों के साथ व्यंग एवं आलोचना प्रधान शैली को भी अपनाया गया।

4) **पद्य के साथ-साथ गद्य का महत्व** – मध्यकाल में केलव पद्य रचनाओं का सृजन होता था, किन्तु पुनर्जागरण काल में गद्य लेखन भी किया जाने लगा। इटली निवासी बुकासियो की रचना डेकमेरॉन पुनर्जागरणकालीन गद्य का प्रमुख उदाहरण है।

❖ इतालवी साहित्य

इटालवी भाषा में **दांते** ने Divine Comedy एवं The Monarchia की रचना की। Divine Comedy में एक काल्पनिक जगत की यात्रा का वर्णन है। दांते इस काल्पनिक यात्रा मे नरक, पाप-मोचन स्थल तथा स्वर्ग की यात्रा करता है। सर्वप्रथम नरक में यातनाओं का दृश्य दिखाई देता है, फिर पाप-मोचन स्थल में संयम एवं कठोर जीवन से आत्मशुद्धि होती है, तदुपरान्त स्वर्ग का अनन्त सुख प्राप्त होता है। यह यात्रा दुःख (नरक) से प्रारंभ होकर सुख (स्वर्ग) में समाप्त होती है। इस प्रकार इस रचना के द्वारा मनुष्य को नैतिक एवं संयमी जीवनयापन करने की प्रेरणा मिलती है।

दांते के बाद **पेट्रार्क** ने अपनी रचनाओं में प्रकृति तथा मनुष्य के हर्ष व विषाद का मार्मिक वर्णन किया है। पोट्रार्क ने ही सर्वप्रथम अपने साहित्य के माध्यम से मानववादी विचारधारा को प्रोत्साहित किया, इसलिए उसे मानववाद का पिता भी कहा जाता है। पेट्रार्क की मृत्यु के बाद उसके समस्त पत्र '**फेमीलियर लेटर्स**' नामक शीर्षक से प्रकाशित हुए।

पेट्रार्क के शिष्य **बुकासियो** की प्रमुख कृति '**डेकमेरॉन**' है, यह 100 कहानियों का संग्रह है। बुकासियो को इटालवी गद्य का पिता कहा जाता है। कहानियों के माध्यम से इसने मानवता और दया का संदेश दिया।

इटली के राजनीतिक चिंतक **मैकियावेली** की रचना '**द प्रिंस**' को पुनर्जागरणकालीन राजनीति शास्त्र का सर्वप्रमुख ग्रंथ माना जाता है। द प्रिंस में यथार्थवादी दृष्टिकोण तथा साध्य के लिए किसी भी साधन की उपयुक्तता के सिद्धान्त का समर्थन किया गया है।

❖ फ्रांसीसी साहित्य

पुनर्जागरण काल में फ्रांस में **रेबेलास** तथा **मॉन्टेन** प्रमुख साहित्यकार हुए। मॉन्टेन को '**आधुनिक निबन्ध विधा का जनक**' तथा '**प्रथम आधुनिक व्यक्ति**' माना जाता है। इन लेखकों ने परम्परागत धार्मिक और सामाजिक मान्यता पर कटु व्यंग्य किए तथा मनुष्य के महत्व को स्थापित किया।

❖ अग्रेजी साहित्य

जाफरे चौसर को अंग्रेजी काव्य का पिता कहा जाता है, उसने '**कैंटरबरी टेल्स**' की रचना की। चौसर के बाद **टॉमस मूर** ने '**यूटोपिया**' की रचना की, जिसमें इंग्लैण्ड में व्याप्त सामाजिक एवं आर्थिक बुराइयों को व्यक्त किया गया। पुनर्जागरण काल में ब्रिटेन निवासी **फ्रांसिस बेकन** को सर्वोत्तम निबंधकार माना जाता है। उसी प्रकार इस युग में **विलियम शेक्सपियर** महान कवि एवं नाटककार हुए, उनके प्रमुख नाटक मर्चेन्ट ऑफ वेनिस, रोमियो-जूलियट, हेमलेट, मैकबेथ आदि हैं।

इसी काल में स्पेन के **सर्वेन्टिस** ने विश्व प्रसिद्ध '**डॉन क्विकजोट**' की रचना स्पेनिश भाषा में की। उसी प्रकार हॉलैण्ड का **इरास्मस** इस युग का प्रमुख साहित्यकार व मानववादी था। इरास्मस को उसकी विद्वता, शैली और परिपक्व विचारों के कारण '**यूरोप का विद्वान**' कहा जाता है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

- ***कला के क्षेत्र में***

पुनर्जागरणकाल में हुई कला की उन्नति को देखते हुए इसे यूरोपीय कला-कौशल का स्वर्ण युग कहा जाता है। मध्यकालीन कला में धर्म का व्यापक प्रभाव था। कलाकारों ने धर्म द्वारा प्रतिपादित विषय को ही अपनाया। चित्रकारों के लिए रंग निश्चित थे, उनके नियमों को तोड़ना धर्म विरुद्ध समझा जाता था। संतों की गर्दन सदैव लम्बी बनाई जाती थी, जिसका उद्देश्य यह प्रकट करता था कि वे मानो अपने सद्गुणों की वजह से स्वर्ग की ओर खिंच रहे हो। किन्तु पुनर्जागरणकाल में कला में धर्म का प्रभाव कम हुआ, जिससे कला में मौलिकता, सौन्दर्य व सजीवता का समावेश हुआ। इस युग की कला का उद्देश्य जीवन एवं प्रकृति से तारतम्य स्थापित करना था।

❖ **चित्रकाल**

पुनर्जागरणकालीन चित्रकला की निम्नलिखित विशेषताएं थीं -

1) जहां मध्यकालीन चित्रकला का विषय मुख्यत: धर्म था, वहीं पुनर्जागरणकालीन चित्रकला में मानववादी विचारों से प्रेरित होकर कलाकारों ने अपनी कलाकृतियों में मनुष्य जीवन को भी समाहित किया।

2) जहां मध्यकाल में कलाकारों को अपनी कलाकृतियों में कुछ ही रंगों का प्रयोग करने की छूट थी, वहीं पुनर्जागरणकालीन कलाकारों ने स्वच्छन्द रूप से विभिन्न चटकीले, भड़कीले व गहरे रंगों का भी प्रयोग किया।

3) मध्यकालीन चित्रों में प्रकाश और छाया का संतुलन नहीं था, अर्थात् - मुख्य चित्र व बैकग्राउंड में सामंजस्य नहीं होता था। इससे यह पता ही नहीं चलता था कि मुख्य विषयवस्तु क्या है? किन्तु पुनर्जागरण काल में सर्वप्रथम लियोनार्दो द विन्सी ने प्रकाश और छाया का संतुलित प्रयोग किया। 'मोनालिसा' और 'द लास्ट सपर' जैसे चित्रों में यह संतुलन दिखाई देता है।

4) मध्यकालीन चित्रकारों ने मनुष्य के शरीर के विभिन्न अंगों का आनुपातिक चित्रण नहीं किया। कभी आंख तो कभी मुँह को आवश्यकता से अधिक बड़ा बना दिया जाता था, किन्तु पुनर्जागरणकाल में मनुष्य के शरीर के विभिन्न अंगों का अनुपातिक चित्रण किया जाने लगा। परिणामस्वरूप चित्रों में अधिक स्पष्टता व सजीवता आई।

5) पुनर्जागरणकालीन चित्रों की प्रमुख विशेषता थी - किनारीदार चित्र, अर्थात् - मूल चित्र के चारों ओर खाली किनारी।

उपर्युक्त विशेषताओं से युक्त चित्रों का सर्वप्रथम निर्माण इटली में हुआ। जियोटो, लियोनार्दो द विन्ची, रॉफेल तथा माइकल एंजलो इस काल के प्रमुख चित्रकार थे। **लियोनार्दो द विन्ची** ने '**द लास्ट सपर**' का त्रिआयामी (3D) चित्रांकन किया, जिसमें ईसा मसीह रात्रिभोज पर अपने साथियों के मध्य यह घोषणा कर रहे हैं कि उनमें से कोई साथी विश्वासघात करने वाला है। ईसा के चेहरे पर भाव शांत व चित्त स्थिर है, लेकिन उनके साथियों के चेहरे पर अलग-अलग भाव अंकित हैं। इसी प्रकार '**मोनालिसा**' की रहस्यमयी मुस्कान भी कला जगत् की एक अमूल्य निधि है। **रॉफेल** द्वारा निर्मित '**मेडोना**' का चित्र तथा **माइकल एंजलो** द्वारा रोम के सिस्टाइन गिरजाघर की दीवार पर निर्मित '**लास्ट जजमेंट**' नामक चित्र विश्व विख्यात हैं।

❖ **स्थापत्य कला**

मध्यकालीन यूरोप में स्थापत्य की गोथिक शैली प्रचलित थी, जिसमें सुन्दरता का अभाव था, किन्तु पुनर्जागरणकाल में यूनानी, रोमन तथा अरबी शैलियों के समन्वय से एक नवीन समन्वित शैली का विकास हुआ। अब स्थापत्य में शृंगार -सज्जा, अलंकरण, मेहराब और स्तम्भों का प्रयोग किया जाने लगा। इस काल के प्रमुख स्थापत्य कलाकार ब्रूनेलेस्की, जियोबर्टी, माइकल एन्जेलो आदि थे। माइकल एन्जेलो व रॉफेल द्वारा निर्मित रोम स्थित सेंट पीटर का गिरिजाघर स्थापत्य कला का सुन्दर नमूना है।

❖ **मूर्ति कला**

स्थापत्य कला के साथ ही मूर्ति कला का भी विकास हुआ। इस काल में जियोवर्टी, दोनातेल्लो, माइकल एन्जलो आदि प्रमुख मूर्तिकार थे। माइकेल एन्जेलो की '**डेविड**' तथा '**पियथा**' मूर्ति कला के सुन्दर उदाहरण हैं। '**पियथा**' नामक मूर्ति बिल्कुल अपने नाम के अनुकूल है, क्योंकि उसे देखकर स्वत: करुणा जाग उठती है।

❖ **संगीत कला**

पुनर्जागरणकाल में धार्मिक व लौकिक संगीत का भेदभाव समाप्त हो गया। इस काल में कुछ नवीन वाद्य यंत्रों का भी आविष्कार हुआ, जैसे - वायलिन, हाप्सीकार्ड आदि। आधुनिक '**ओपेरा**' (Opera) का जन्म भी इसी काल में हुआ था। इस काल में मास्किनदस तथा पालेस्ट्राइना प्रमुख संगीतज्ञ हुए।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

- ***विज्ञान के क्षेत्र में***

पुनर्जागरणकाल में विज्ञान के क्षेत्र में भी अभूतपूर्व उन्नति हुई। मध्य युग में चर्च विज्ञान की प्रगति में सबसे बड़ा बाधक था, किन्तु पुनर्जागरण चेतना के कारण चर्च की आस्था में कमी आई, परिणामस्वरूप लोग संकीर्ण विचारों को त्याग कर आधुनिक विचारों के सम्पर्क में आए, जिससे ज्ञान का विकास हुआ।

पुनर्जागरणकाल में रोजर बेकन ने प्रयोगात्मक विज्ञान को जन्म दिया, उनके प्रयासों से प्रकृति के गुप्त रहस्यों को जानने की प्रेरणा मिली। अभी तक प्रचलित यह विचारधारा कि पृथ्वी विश्व के केन्द्र में है और सूर्य उसके चारों ओर घूमता है, को पोलैण्ड के कॉपरनिकस ने गलत प्रमाणित कर सिद्ध किया कि पृथ्वी एक उपग्रह है, जो सूर्य की के चारों ओर घूमती है, किन्तु पोप की आज्ञा से उसे अपना शोध कार्य बंद करना पड़ा। आगे इटली के वैज्ञानिक ब्रूनो ने जब कॉपरनिकस के सिद्धान्त को अनुमोदित किया, तब उसे जला दिया गया। इसके बाद इटली के ही गैलिलियो ने टेलिस्कोप का आविष्कार कर कॉपरनिकस के ही सिद्धान्त को अकाट्य सिद्ध किया। उसी प्रकार इंग्लैण्ड के वैज्ञानिक न्यूटन ने गुरुत्वाकर्षण का सिद्धान्त प्रतिपादित कर खगोल विज्ञान के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की।

इसी काल में नीदरलैण्ड के वेसेलियस ने शल्य चिकित्सा प्रणाली का गहरा अध्ययन किया तथा मानव की शारीरिक संरचना को स्पष्ट किया। जीव विज्ञान के क्षेत्र ने विलियम हार्वे ने रक्त परिसंचरण का सिद्धान्त दिया। जर्मनी के जॉन गुटेनबर्ग ने प्रिंटिंग प्रेस की खोज की। 1582 ई. में 13वें पोप ग्रेगरी ने सौर वर्ष को एकदम ठीक बनाने के लिए लीप वर्ष को समायोजित किया। इस सुधरे हुए कैलेण्डर को ग्रेगरी कैलेण्डर कहा जाता है, जिसे वर्तमान में सम्पूर्ण विश्व में मान्यता प्राप्त है।

❒ पुनर्जागरण का प्रभाव

- **साहित्य, कला व विज्ञान के क्षेत्र में विकास**

पूर्व में उल्लेखित।

- **भौगोलिक खोजें**

पुनर्जागरण चेतना द्वारा जगाई गई जिज्ञासा व साहस की भावना ने नए देशों की खोज करने और नए समुद्री रास्तों का पता लगाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। 1487 ई. में बार्थोलोम्यू डियाज ने Cape of Good Hope, 1492 ई. में कोलम्बस ने अमेरिका तथा 1498 ई. में वास्कोडिगामा ने भारत की खोज की। इन भौगोलिक खोजों ने अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को बढ़ावा दिया तथा उपनिवेशवाद एवं साम्राज्यवाद का आधार तैयार किया।

- **राजनीतिक जीवन पर प्रभाव**

पुनर्जागरण के परिणामस्वरूप यूरोप में परिवर्तन विरोधी निरंकुश राजतंत्र व सामंतवाद का विरोध किया जाने लगा, राजनीतिक कार्यों में पोप का हस्तक्षेप अनुचित माना जाने लगा। इस प्रकार निरंकुश राजतंत्र की जगह संवैधानिक राजतंत्र या प्रजातंत्र का विचार मजबूत होने लगा। इसी काल में मैकियावेली ने '**द प्रिंस**' (The Prince) नामक पुस्तक में आधुनिक राजव्यवस्था की शुरुआत की।

पुनर्जागरण के फलस्वरूप राष्ट्रीयता की भावना का संचार हुआ। लोगों में राष्ट्र के प्रति अद्भुत प्रेम पैदा होने लगा। देशी भाषाओं की उन्नति के कारण इस प्रक्रिया में बड़ी सहायता मिली। परिणामस्वरूप राष्ट्रीय राज्यों की स्थापना होने लगी।

- **समाजिक जीवन पर प्रभाव**

पुनर्जागरणकाल में व्यक्तिगत सामर्थ्य एवं योग्यता को महत्व दिया जाने लगा, जिससे समाज में साहित्य, कला व विज्ञान से जुड़े लोगों का महत्व बढ़ा। ये कलाकार या तो निम्न वर्ग या फिर मध्यम वर्ग से संबंधित थे, अतः इन्होंने कुलीन वर्ग के विशेषाधिकारों के विरुद्ध आवाज उठाई। इससे सामाजिक तनाव में वृद्धि हुई, जिसकी परिणति हमें फ्रांसीसी क्रांति के रूप में दिखाई देती है।

- **धार्मिक जीवन पर प्रभाव**

पुनर्जागरण काल में तर्क एवं बुद्धि को महत्व दिया जाने लगा तथा धर्म की आलोचनात्मक व्याख्या की जाने लगी। परिणामस्वरूप मानव जीवन पर धर्म की पकड़ ढीली हुई। दांते, इरास्मस जैसे विद्वानों ने चर्च व्यवस्था में परिवर्तन की मांग की। अब धर्म सुधार की आवश्यकता महसूस की जाने लगी। इस प्रकार मार्टिन लूथर के धर्म सुधार आन्दोलन की पृष्ठभूमि पुनर्जागरण ने ही तैयार कर दी।

इस प्रकार पुनर्जागरण की अभिव्यक्ति जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में हुई। वस्तुतः पुनर्जागरण ने ही प्रजातंत्र, वैश्वीकरण, धर्मनिरपेक्षता, सर्वधर्म समभाव, वैज्ञानिक प्रगति आदि का मार्ग प्रशस्त किया।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

इंग्लैण्ड की क्रांति (1688 ई.)
Revolution of England (1688 AD)

मध्य प्रदेश लोक सेवा आयोग की मुख्य परीक्षा हेतु प्रकाशित नवीन पाठ्यक्रम में उल्लेखित इंग्लैण्ड की क्रांति से तात्पर्य 1688 ई. में इंग्लैण्ड में हुई **गौरवशाली क्रान्ति** (The Glorious Revolution) या **रक्तहीन क्रांति** से है। इसे 'गौरवशाली क्रांति' अथवा 'रक्तहीन क्रांति' इसलिए कहा जाता है, क्योंकि इस क्रांति में किसी भी पक्ष के व्यक्ति के रक्त की एक बूंद भी नहीं निकली और केवल प्रदर्शन एवं वार्तालाप से ही क्रांति सफल हो गई। इस क्रांति के उपरान्त इंग्लैण्ड के राजा जेम्स द्वितीय को राजसिंहासन गवाना पड़ा। जेम्स द्वितीय की जगह उसकी पुत्री मेरी एवं दामाद विलियम (हॉलैण्ड का राजकुमार) को संयुक्त शासक बनाया गया। इंग्लैण्ड राजतंत्र की जगह संवैधनिक राजतंत्र स्थापित हो गया तथा राजा की जगह संसद की सर्वोच्चता स्थापित हो गई।

❐ क्रांति के कारण

◆ राजनीतिक कारण

1) **जेम्स द्वितीय की निरंकुशता** – जेम्स द्वितीय निरंकुश एवं स्वेच्छाचारी शासक था। उसने अपनी सेना में वृद्धि की, ताकि वह जनता को आतंकित कर सके। उसके निरंकुश एवं स्वेच्छाचारी शासन का जनता द्वारा विरोध किया जाना स्वाभाविक था।

2) **संसद द्वारा अधिकारों के लिए संघर्ष** – संसद अपने विशिष्ट अधिकारों का उपयोग चाहती थी। वह राजा के अधिकारों को सीमित और नियंत्रित करना चाहती थी। फलतः राजा और संसद के मध्य संघर्ष प्रारंभ हो गया। इस संघर्ष का अंत शानदार क्रांति के रूप में हुआ और अंत में संसद ने राजा पर विजय प्राप्त की।

3) **खूनी न्यायालय** – चार्लस द्वितीय के अवैध पुत्र मन्मथ ने सिंहासन प्राप्ति के लिए जेम्स द्वितीय के विरूद्ध विद्रोह कर दिया और स्वयं को चार्ल्स द्वितीय का उत्तराधिकारी घोषित कर दिया। जेम्स द्वितीय ने मन्मथ को युद्ध में परास्त कर बंदी बना लिया और उसे तथा उसके साथियों को न्यायालय द्वारा मृत्युदण्ड दिया गया। इस न्यायालय को खूनी न्यायालय कहा गया। स्काटलैण्ड में भी अर्ल ऑफ अरगिल ने व्रिदोह किया। इस विद्रोह का भी कठोरता से दमन किया गया। तीन सौ व्यक्तियों को मृत्युदण्ड दिया गया और 800 व्यक्तियों को दास बनाकर वेस्टइंडीज द्वीपों में भेजकर बेच दिया गया। स्त्रियों और बच्चों को भी क्षमा नहीं किया गया। इस क्रूरता और निर्दयता से जनता उससे रुष्ट हो गई।

4) **जेम्स द्वितीय की निष्फल विदेश-नीति** – जेम्स द्वितीय फ्रांस के कैथोलिक राजा लुई 14वें से आर्थिक और सैनिक सहायता प्राप्त कर इंग्लैण्ड में अपना निरंकुश स्वेच्छाकारी शासन स्थापित करना चाहता था। वह लुई 14वें के धन और सैनिक सहायता के आधार पर राज करना चाहता था। लुई 14वां कैथोलिक था और फ्रांस में प्रोटेस्टेंटों पर अत्याचार कर रहा था। इससे ये प्रोटेस्टेंट इंग्लैण्ड में आकर शरण ले रहे थे। ऐसी दशा में इंग्लैण्डवासी और संसद सदस्य नहीं चाहते थे कि जेम्स द्वितीय, लुई 14वें से मित्रता रखे और उससे सहायता प्राप्त करे। अतः वे जेम्स द्वितीय के विरोधी हो गए।

◆ धार्मिक कारण

1) **कैथोलिक धर्म के लिए प्रसार** – जेम्स द्वितीय कैथोलिक मत का अनुयायी था, जबकि इंग्लैण्ड की अधिकांश जनता एंग्लिकन मत की अनुयायी थी। जेम्स कैथोलिकों को अधिकाधिक सुविधाएं प्रदान करना चाहता था। जेम्स द्वितीय ने पोप को इंग्लैण्ड में आमंत्रित किया और उसका अत्यधिक सम्मान किया। उसने लंदन में कैथोलिक गिरजाघर भी स्थापित किया। इससे इंग्लैण्ड के प्युरीटन और प्रोटेस्टेंट उसके विरोधी हो गए।

2) **टेस्ट अधिनियम को स्थगित करना** – टेस्ट अधिनियम के अंतर्गत केवल एंग्लिकन चर्च के अनुयायी ही सरकारी पद पर रह सकते थे। जेम्स द्वितीय ने इस अधिनियम को स्थगित कर अनेक कैथोलिकों को राजकीय पदों पर प्रतिष्ठित किया। मंत्री, न्यायाधीश, नगर-निगम के सदस्य तथा सेना में ऊँचे पदों पर कैथोलिक नियुक्त किए गए। अतः सांसद इससे रुष्ट हो गए।

3) **विश्वविद्यालयों में हस्तक्षेप** – कैथोलिक मतावलंबी होने से जेम्स द्वितीय ने विश्वविद्यालयों में भी ऊँचे पदों पर कैथोलिक नियुक्त कर दिए। क्राइस्ट चर्च कॉलेज में अधिष्ठाता के पद पर और केम्ब्रिज विश्वविद्यालय के कुलपति पद पर एक कैथोलिक को नियुक्त किया। इससे प्रोटेस्टेंट सम्प्रदाय के लोग जेम्स विरोधी हो गए।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

4) **धार्मिक अनुग्रहों की घोषणाएं** – जेम्स द्वितीय ने इंग्लैण्ड को कैथोलिक देश बनाने के लिए 1687 ई. और 1688 ई. में दो बार धार्मिक अनुग्रह की घोषणा की। प्रथम घोषणा से केथालिकों तथा अन्य मताबलम्बियों पर लगे प्रतिबंधों व नियंत्रणों को समाप्त कर दिया गया और द्वितीय घोषणा में वर्ग व धर्म का पक्षपात किए बिना सभी लोगों के लिए राजकीय पदों पर नियुक्ति का मार्ग प्रशस्त किया गया। साथ ही कैथलिकों को धार्मिक स्वतंत्रता प्रदान कर दी गई। इससे संसद में भारी असंतोष व्याप्त हो गया एवं सांसद उसके घोर विरोधी हो गए।

5) **सात पादरियों पर अभियोग और उनको बंदी बनाना** – जेम्स ने यह आदेश दिया कि प्रत्येक रविवार को उसकी द्वितीय धार्मिक घोषणा पादरियों द्वारा चर्च में प्रार्थना के अवसर पर पढ़ी जाए। इसका यह परिणाम होता कि या तो पादरी अपने धर्म व मत के विरूद्ध इस घोषणा को पढ़ें, अथवा राजा की आज्ञा का उल्लंघन करें। इस पर केंटरबरी के आर्च बिशप सेनक्राफ्ट ने अपने 6 साथियों सहित जेम्स को एक आवेदन पत्र प्रस्तुत किया। जिसमें जेम्स से निवेदन किया था कि वह अपनी आज्ञा को निरस्त कर दे और पुराने नियमों को भंग करने की नीति को त्याग दें। इससे जेम्स ने क्रोधित होकर इन पादरियों को बंदी बना कर उन पर राजद्रोह का मुकदमा चलाया, पर न्यायाधीशों ने उनको दोष मुक्त कर दिया। इससे जनता और सेना ने पादरियों की मुक्ति पर हर्ष और जेम्स के प्रति विरोध व्यक्त किया।

6) **कोर्ट ऑफ हाई कमीशन की स्थापना** – 1686 ई. में जेम्स ने गिरजाघरों पर राजकीय श्रेष्ठता स्थापित करने के लिए '**कोर्ट ऑफ हाई कमीशन**' को पुनः स्थापित किया। इसमें कैथोलिक धर्म की अवहेलना करने वालों पर मुकदमा चलाकर उनको दण्डित किया जाता था।

7) **नवीन कैथोलिक गिरजाघर** – 1686 ई. में जेम्स ने कैथोलिक धर्म के अधिक प्रचार और प्रसार के लिए लंदन में एक नवीन कैथोलिक गिरजाघर स्थापित किया। जेम्स ने धार्मिक न्यायालयों की स्थापना करके कानून को भंग किया, गिरजाघरों, विद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों पर आक्रमण कर पादरियों और टोरियों को रुष्ट किया। जेम्स के इन अनुचित और अवैध कार्यों से देश में विरोध और क्रांति की भावनाएं फैल गईं।

❐ क्रान्ति की घटनाएं

1) **जेम्स द्वितीय के पुत्र का जन्म** – जेम्स द्वितीय की पहली पत्नी की मेरी नामक पुत्री हुई थी। वह प्रोटेस्टेंट मतावलंबी थी और हालैण्ड में ऑरेंज के राजकुमार विलियम को ब्याही गई थी, वह भी प्रोटेस्टेंट था। इंग्लैण्डवासियों को विश्वास था कि वही इंग्लैण्ड की शासिका बनेगी, इसलिए वे जेम्स के अनाचार और अनुचित कार्यों को सहन करते रहे। जेम्स की दूसरी पत्नी कट्टर कैथोलिक थी। जब 10 जून, 1688 ई. को उसका पुत्र हुआ तो लोगों की यह धारणा बन गई कि उसका लालन-पालन और शिक्षा कैथोलिक धर्म के अनुसार होगी और जेम्स की मृत्यु के बाद वही कैथोलिक राजा बनेगा। इससे उनमें भय और आतंक छा गया।

2) **हालैण्ड के विलियम और मेरी को निमंत्रण** – टोरी और व्हिंग दल के सदस्यों और पादरियों ने एक जनसभा आयोजित कर यह निर्णय लिया कि जेम्स द्वितीय के दामाद विलियम और पुत्री मेरी को इंग्लैण्ड के राजसिंहासन पर आसीन होने के लिए आमंत्रित किया जाए। फलतः कुछ प्रभावशाली लोगों ने दूत भेजकर विलियम और मेरी को इंग्लैण्ड आमंत्रित किया। इस समय विलियम फ्रांस के युद्ध में व्यस्थ था। वह जानता था कि फ्रांस और वहां का राजा लुई 14वां हालैण्ड से कहीं अधिक शक्तिशाली है। वह इंग्लैण्ड की समन्वित शाक्ति का सामना नहीं कर सकेगा, इसलिए उसने निमंत्रण स्वीकार कर लिया।

3) **विलियम का इंग्लैण्ड में आगमन और जेम्स का पलायन** – विलियम ऑफ ऑरेंज 15 हजार सैनिकों के साथ 5 नवम्बर, 1688 ई. को इंग्लैण्ड के टोरबे बंदरगाह पर उतरा। जेम्स द्वितीय ने अपनी सेना से उसका सामना करने का प्रयास किया, पर उसके सहयोगी व सेनापति जॉन चर्चिल ने उसका साथ छोड़ दिया तथा विलियम से जा मिला। निराश होकर 23 दिसम्बर, 1688 ई. को जेम्स द्वितीय राजमुद्रा को टेम्स नदी में फेंककर फ्रांस पलायन कर गया।

4) **विलियम और मैरी इंग्लैण्ड के शासक** – 22 जनवरी 1689 ई. को संसद की बैठक हुई, जिसमें बिल ऑफ राइट्स पारित हुआ। इसमें विलियम के सम्मुख कुछ शर्तें रखी गई थीं, जिनको उसने स्वीकार कर लिया। इसके बाद विलियम तथा मेरी 13 फरवरी, 1689 ई. को इंग्लैण्ड के राजसिंहासन पर आसीन हुए। विलियम और मेरी संयुक्त शासक स्वीकार किए गए।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

❐ महत्व और परिणाम

इस प्रकार 1688 ई. में इंग्लैण्ड में शासकों का परिवर्तन बिना रक्त की बूंद बहाए संपन्न हो गया, इसलिए इस घटना को वैभवपूर्ण महान शानदार क्रांति कहते हैं। इस रक्तहीन राज्य क्रांति का महत्व उसके गर्जन-तर्जन में नहीं, अपितु उसके उद्देश्यों की विवेकशीलता और उपलब्धियों की दूरगामिता में है। यह एक युग निर्माणकारी घटना है। इससे इंग्लैण्ड में लोकप्रिय सरकार का युग प्रारंभ हुआ और सत्ता निरंकुश स्वेच्छाचारी राजाओं के हाथ से निकलकर संसद के हाथों में आ गई। इसके परिणाम अधोलिखित हुए -

1) इस क्रांति से स्टुअर्ट राजाओं और संसद के बीच दीर्घकाल से चले आ रहे संघर्ष का अंत हो गया। इस संघर्ष में संसद की विजय हुई। अब इंग्लैण्ड में वास्तविक शासक संसद बन गई।

2) **सम्प्रभुता संसद में निहित** - क्रांति के समय संसद ने '**बिल ऑफ राइट्स**' पारित कर उस पर विलियम और मेरी की स्वीकृति ले ली। इससे संसद की सम्प्रभुता स्वीकार कर ली गई और राजा की सर्वोच्च सत्ता समाप्त कर दी गई। जनता की सत्ता सर्वोपरि मान ली गई।

3) **दैवीय सिद्धांत अमान्य और संसद के व्यापक अधिकार** - इस क्रांति ने राजा के दैवीय अधिकारों को अमान्य कर दिया। संसद द्वारा पारित किसी कानून को निरस्त करने का राजा का अधिकार समाप्त हो गया। राजा, संसद की स्वीकृति के बिना कोई कर नहीं लगा सकता। इस क्रांति ने यह स्पष्ट कर दिया कि नागरिक स्वतंत्रता की रक्षा करना, कानून बनाना और कर लगाना संसद के अधिकारों के अंतर्गत है। राजा संसद के अधिकारों में किसी भी प्रकार से हस्तक्षेप नहीं कर सकता था।

4) **संवैधानिक राजतंत्र की स्थापना** - क्रांति से पूर्व राजा सर्वोपरि था, पर इसके बाद राजा संसद के अधिनियम के अंतर्गत एक सामान्य व्यक्ति रह गया। अब राजा की स्वेच्छाचारिता समाप्त हो गई। उसके अधिकार संसद द्वारा प्रतिबंधित नियंत्रित और सीमित कर दिए गए। अब इंग्लैण्ड में वैधानिक राजतंत्र का युग प्रारंभ हुआ और संसदीय प्रणाली का शासन प्रारंभ हुआ।

5) **सेना पर संसद का अधिकार** - अब तक सेना और उसके अधिकार राजा के अधीन थे। अब संसद ने विद्रोह अधिनियम पारित कर सेना पर पूर्ण नियंत्रण स्थापित कर लिया। इससे राजा की सैन्य शक्ति समाप्त हो गई और सेना में व्याप्त अव्यवस्था भी दूर हो गई।

6) **कैथोलिक खतरे का अंत और इंग्लैण्ड का धर्म एंग्लिकन** - बिल ऑफ राइट्स में यह तथ्य स्पष्ट कर दिया गया कि कोई कैथोलिक राजा या वह व्यक्ति जिसका विवाह कैथोलिक से हुआ हो इंग्लैण्ड के राज सिंहासन पर आसीन नहीं हो सकेगा। इस प्रकार इंग्लैण्ड सदा के लिए कैथोलिक खतरे से मुक्त हो गया। धार्मिक क्षेत्र में भी यह स्पष्ट कर दिया गया कि एंग्लिकन धर्म इंग्लैण्ड का वास्तविक धर्म है। चर्च पर से राजा के अधिकारों का अंत कर दिया गया। धर्म के मामलों में भी संसद का उत्तरादायित्व हो गया। इससे कालांतर में इंग्लैण्ड में धार्मिक सहिष्णुता का वातावरण निर्मित हुआ।

7) **संसद द्वारा गृह और विदेश-नीति का निर्धारण** - अब तक राजा देश की गृह और विदेश नीतियों का स्वयं संचालन करता था। वह अपने व्यक्तिगत स्वार्थों से प्रेरित रहता था। देश के हितों की उपेक्षा की जाती थी। इससे अनेक बार राजा द्वारा अपनाई गई विदेश-नीति निष्फल ही रही। किन्तु क्रांति के बाद गृह और विदेश-नीति का निर्धारण संसद के परामर्श और स्वीकृति से किया जाने लगा। इससे इंग्लैण्ड की अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिष्ठा में वृद्धि हुई और उसके औपनिवेशक साम्राज्य का विस्तार हुआ।

8) **यूरोप की राजनीति पर प्रभाव** - इंग्लैण्ड की इस शानदार क्रांति का प्रभाव यूरोप के देशों पर पड़ा। अब तक यूरोप में निरंकुश स्वेच्छाचारी राजसत्ता ही आदर्श राजसत्ता मानी जाती थी। परन्तु इस क्रांति के प्रभाव और परिणामस्वरूप यूरोप में भी संवैधानिक राजतंत्र और लोकतंत्रात्मक शासन प्रणाली के लिए आंदोलन प्रारंभ हो गए।

9) **अमेरिकी क्रांति की पृष्ठभूमि तैयार** - 1688 ई. में इंग्लैण्ड में हुई इस रक्तहीन क्रांति ने अमेरिका (इंग्लैंड का उपनिवेश) में भी स्वतंत्रता की मांग बुलंद की। अमेरिका में शासन ब्रिटिश संसद द्वारा चलाया जाता था, जो अमेरिकावासियों को सहन न था। वे स्वतंत्र रूप से शासन करना चाहते थे। अत: अमेरिकी उपनिवेश ने अपनी स्वतंत्रता के लिए जो संघर्ष किया, वही अमेरिकी क्रांति कहलाती है। यह क्रांति 1776 ई. में हुई।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

फ्रांस की क्रांति
French Revolution

किसी भी देश में होने वाली क्रांति के बीज उस देश की जनता की स्थिति और मनोदशा में निहित होते हैं। असंतोष को जन्म देने वाली भौतिक परिस्थितियां क्रांति हेतु आवश्यक पृष्ठभूमि तैयार करती है तथा बौद्धिक चेतना जनता को उन परिस्थितियों से मुक्ति पाने हेतु प्रेरित करती है। ऐसी स्थिति में जब सरकार अथवा शासन के लिए पुरानी लीक पर चलना कठिन हो जाता है, साथ ही सरकार उचित समय पर सुधार योजना द्वारा नया पथ खोजने में असफल हो जाती है। तब असंतुष्ट वर्ग को अपनी ताकत का अहसास हो जाता है और देश में क्रांति का होना अनिवार्य हो जाता है। 1789 ई. की फ्रांस की क्रांति भी इस नियम का अपवाद नहीं है।

❐ क्रांति के कारण

फ्रांस में क्रांति का विस्फोट क्यों और कैसे हुआ, इसे समझने के लिए पुरातन व्यवस्था (Ancient Regime) का सर्वेक्षण करना आवश्यक है। यहां पुरातन व्यवस्था से आशय क्रांति के पहले की व्यवस्था से है। इसके अन्तर्गत फ्रांस की राजनीतिक, सामाजिक तथा आर्थिक व्यवस्थाओं का विश्लेषण करके ही हम उन जटिल समस्याओं को समझ सकते हैं, जिन्होंने क्रांति की पृष्ठभूमि तैयार की।

◆ राजनीतिक कारण

फ्रांस में निरंकुश व वंशानुगत राजतंत्र था। राजा स्वयं को पृथ्वी पर ईश्वर का प्रतिनिधि मानता था। निरंकुशता की इस परम्परा को स्थापित करने वाला लुई 14वां (1643 ई. - 1715 ई.) था। उसने 'मैं ही राज्य हूं' कहकर अपनी निरंकुश सत्ता का परिचय दिया। उसने स्थायी सेना का गठन किया तथा सामन्तों का दमन कर प्रशासन तंत्र का पूर्ण केन्द्रीकरण किया। वह कार्यपालिका, विधायिका व न्यायपालिका तीनों का प्रमुख था। वह कोई भी कानून बना सकता था, किसी भी प्रकार का कर लगा सकता था तथा राजकीय आय को मनमाने ढंग से खर्च कर सकता था। इस प्रकार शासन के प्रत्येक अंग पर राजा का प्रत्यक्ष नियंत्रण था।

लुई 14वें ने शासन का जिस प्रकार केन्द्रीकरण किया था, उसमें राजा का योग्य होना आवश्यक था। लेकिन लुई 14वें के उत्तराधिकारी लुई 15वां (1715 ई. - 1774 ई.) तथा लुई 16वां (1774 ई. - 1793 ई.) दोनों पूर्णतः अयोग्य, लापरवाह व विलासी थे। लुई 15वें ने सुधार करने के स्थान पर एक मौके पर कहा था कि "वर्तमान व्यवस्था में तो मेरा समय कट जाएगा, किन्तु मेरे मरने के बाद प्रलय होगा।" लुई 16वें के शासनकाल में स्थिति और भी बिगड़ गई, उसमें न तो स्वयं निर्णय कर सकने की और न ही दूसरे की सलाह को समझने की क्षमता थी। राज्य की समस्याओं में उसकी कोई रुचि नहीं थी। उसके शासनकाल में वार्साय का राजमहल विलासिता और षड्यंत्रों का केन्द्र बन गया था।

लुई 16वें पर उसकी पत्नी **मेरी एन्त्वायनेत** का प्रभाव था, जो ऑस्ट्रिया के सम्राट जोसेफ द्वितीय की बहन थी। यद्यपि रानी एन्त्वायनेत में राजकार्यों की कोई समझ नहीं थी, वह सदा चाटुकारों से घिरी रहती थी, फिर भी उसने राजकार्यों में अनावश्यक हस्तक्षेप बनाए रखा। परिणामस्वरूप राजा की कठिनाइयां और भी बढ़ गई।

राजा की निरंकुशता पर अंकुश लगाने वाली **फ्रांस में कोई जनप्रतिनिधि सभा या संसद नहीं** थी। यद्यपि फ्रांस में 'एस्टेट्स जनरल' नामक एक प्रतिनिधि सभा अवश्य थी, किन्तु 1614 ई. के बाद उसका कोई अधिवेशन नहीं बुलाया गया था। हालांकि राजा की स्वेच्छाचारिता पर अंकुश लगाने वाली पार्लमाँ नामक संस्था अवश्य थी। इनकी संख्या 13 थीं, जिनमें पेरिस की पार्लमाँ सर्वाधिक महत्वपूर्ण थी। किन्तु पार्लमाँ भी कुलीन वर्ग से निर्मित संस्था थी, न की जनसाधारण की प्रतिनिधि सभा। पार्लमाँ की स्थिति उच्च न्यायालयों के समान थी। न्याय करने के अतिरिक्त पार्लमाँ का कार्य राजा के आदेशों को कानून के रूप में पंजीकृत करना था। पार्लमाँ राजा के आदेशों को पंजीकृत करने से मना कर सकती थी और विरोध प्रदर्शित कर जनता का ध्यान आकर्षित कर सकती थी, परन्तु यदि राजा उसे दोबारा निर्देश दें, तो पार्लमाँ को राजा के आदेश को पंजीकृत करना पड़ता था। इस प्रकार क्रांति हेतु एक प्रमुख कारण राजा की निरंकुशता, स्वेच्छाचारिता, लापरवाही व विलासिता को माना जाता है। इसी संदर्भ में कहा जाता है कि "**फ्रांसीसी राजतंत्र का गला वस्तुतः उसकी निरंकुशता ने ही घोंट दिया।**"

क्रांति से पूर्व **फ्रांस में व्यक्तिगत स्वतंत्रता का पूर्ण अभाव** था। राजा के द्वारा नियुक्त एवं उसी के प्रति उत्तरदायी अधिकारी किसी भी व्यक्ति को 'लात्र द काशे' नामक वारंट जारी कर गिरफ्तार व बिना मुकदमा चलाए कैद कर सकते थे। सरकारी पदों पर नियुक्ति योग्यता के आधार पर नहीं, बल्कि जन्म या क्रय शक्ति के आधार पर होती थी। ऐसे सभी कर्मचारी अयोग्य, अकर्मण्य व भ्रष्ट होते थे।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

क्रांति से पूर्व **फ्रांस में एकसमान विधि संहिता का अभाव** था। पूरे देश में लगभग 385 प्रकार के कानून प्रचलित थे। एक कस्बे में जो बात वैध थी, वही बात उसी स्थान से पांच मील दूर स्थित दूसरे कस्बे में अवैध समझी जाती थी। इस संदर्भ में वाल्टेयर ने कहा था कि "किसी व्यक्ति को फ्रांस में यात्रा करते समय सरकारी कानून उसी प्रकार बदलते हुए मिलते हैं, जिस प्रकार उसकी गाड़ी के घोड़े बदलते हैं।" इससे जनता को कई प्रकार की परेशानियों का सामना करना पड़ता था तथा उनमें असंतोष था।

न्यायिक क्षेत्र में भी कई प्रकार की अनियमितता विद्यमान थी। न्यायालयों के क्षेत्राधिकार अस्पष्ट थे। न्यायिक पदों को बेचने की परम्परा से न्याय व्यवस्था बदतर हो गई थी। दण्ड व्यवस्था कठोर एवं पक्षपातपूर्ण थी। कुछ अपराधों के लिए कुलीन वर्ग को किसी प्रकार की सजा नहीं मिलती थी। अदालतों की भाषा फ्रांसीसी न होकर लैटिन थी।

इस प्रकार क्रांति पूर्व फ्रांस की राजनीतिक व्यवस्था में कई दोष थे। इस संदर्भ में मादलें ने ठीक ही कहा है कि "**फ्रांस में बुरी व्यवस्था का तो कोई प्रश्न नहीं, कोई व्यवस्था ही नहीं थी।**"

- **सामाजिक कारण**

फ्रांसीसी समाज विषम और विघटित था, जो विशेषाधिकार प्राप्त एवं विशेषाधिकार विहीन वर्गों में विभजित था। फ्रांसीसी समाज तीन वर्गों/स्टेट्स में विभक्त था। प्रथम स्टेट्स में पादरी वर्ग, द्वितीय स्टेट्स में कुलीन वर्ग एवं तृतीय स्टेट्स में जनसाधारण शामिल था। पादरी एवं कुलीन वर्ग को व्यापक विशेषाधिकार प्राप्त था, जबकि जनसाधारण अधिकारविहीन था।

1) **प्रथम स्टेट (Ist Estate)** – फ्रांस में कैथोलिक चर्च के पास कई प्रकार के विशेषाधिकार थे। उसे न केवल समस्त प्रकार के करों से मुक्ति थी, बल्कि चर्च कृषकों से उनकी उपज का 10वां भाग कर (टाइथ) के रूप में प्राप्त करता था। देश की भूमि का 5वां भाग चर्च के पास ही था। चर्च के पास शिक्षा, जन्म-मृत्यु के आंकड़े, विवाह एवं अन्य सामाजिक एवं धार्मिक संस्कारों, पत्र-पत्रिकाओं के सेंसर आदि संबंधी एकाधिकार थे। उसके पृथक न्यायालय एवं कानून थे। वास्तव में फ्रांस का चर्च '**राज्य के अन्दर राज्य**' था।

   पादरी वर्ग दो भागों में विभाजित था – उच्च एवं निम्न। उच्च पादरी वर्ग के पास अपार धन था। वे शानोंशौकत एवं विलासपूर्ण जीवन बिताते थे, धार्मिक कार्यों में उनकी रुचि कम थी। इस तरह उनका जीवन भ्रष्ट, अनैतिक और विलासी था। इस कारण यह वर्ग जनता के बीच अलोकप्रीय हो गया था और जनता के असंतोष का कारण भी बन रहा था। दूसरी ओर निम्न पादरी चर्च के सभी धार्मिक कार्यों को सम्पादित करते थे। वे ईमानदार तथा जनसाधारण के बीच रहकर उन्हीं के समान सादा जीवन व्यतीत करते थे। अत: उच्च पादरियों से ये घृणा करते थे और जनसाधारण के प्रति सहानुभूति रखते थे। इसीलिए क्रांति के दौरान निम्न पादरियों ने क्रांतिकारियों को समर्थन दिया।

2) **द्वितीय स्टेट (IInd Estate)** – द्वितीय स्टेट में कुलीन वर्ग, अर्थात् सामंत लोग शामिल थे, जो सेना, चर्च, न्यायालय आदि सभी महत्वपूर्ण विभागों में उच्च पदों पर नियुक्त किए जाते थे। प्रांत में सर्वोच्च पद एतदां के रूप में इनकी नियुक्ति होती थी। ये किसानों से विभिन्न प्रकार के कर वसूलते थे व उनका शोषण करते थे। यद्यपि लुई 13वें के समय रिशूल और लुई 14वें ने कुलीनों को उनके अधिकारों से वंचित कर दिया था, किन्तु आगे लुई 15वें और 16वें के समय उन्होंने अपने अधिकारों को पुन: प्राप्त करने का प्रयास किया। कुलीन वर्ग भी क्रांति का समर्थक था, क्योंकि यह वर्ग पूर्व में अपने खोए हुए विशेषाधिकारों को प्राप्त करना चाहता था।

3) **तृतीय स्टेट (IIIrd Estate)** – तृतीय स्टेट में जनसाधारण वर्ग, अर्थात् – किसान, मजदूर, शिल्पी, व्यापारी और बुद्धिजीवी (मध्यम वर्ग) शामिल थे, जिन्हें कोई विशेषाधिकार प्राप्त नहीं था। इन सभी वर्गों की अपनी-अपनी समस्याएं थीं।

किसानों की संख्या सर्वाधिक थी और उनकी दशा निम्न एवं सोचनीय थी। किसानों को राज्य, चर्च व सामंतों को अनेक प्रकार के कर देने पड़ते थे तथा सामंती अत्याचार को सहना पड़ता था, जबकि राजतंत्र इस पर चुप्पी साधे हुए था। इस प्रकार यह वर्ग परिवर्तन का पक्षधर था।

मध्यम वर्ग (बुर्जुआ) में साहुकार, व्यापारी, शिक्षक, वकील, डॉक्टर, लेखक, कलाकार, कर्मचारी आदि सम्मिलित थे। इनकी आर्थिक दशा तो अवश्य ठीक थी, फिर भी वे तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों के प्रति आक्रोशित थे। इस वर्ग की प्रमुख राजनीतिक मांग जन्म व कुलीनता की बजाय योग्यता के आधार पर प्रशासनिक पदों पर नियुक्ति की थी।,

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

मध्यम वर्ग कुलीनों की सामाजिक श्रेष्ठता से घृणा करता था तथा सामाजिक समानता का पक्षधर था। मध्यम वर्ग की कुछ आर्थिक शिकायतें भी थीं। पूर्व के वाणिज्य - व्यापार के कारण इस वर्ग ने धनसम्पत्ति अर्जित कर ली थी, किन्तु अब सामंती वातावरण में उनके व्यापार पर कई तरह के प्रतिबंध लगे थे, जगह-जगह चुंगी देनी पड़ती थी। वे अपने व्यापार व्यवसाय के लिए उन्मुक्त वातावरण चाहते थे। साथ ही मध्यम वर्ग ने राजतंत्र को ऋण दे रखा था, राज्य की आर्थिक स्थिति को देखते हुए इसे धन वापसी की संभावना कम दिखाई दे रही थी। अत: इसने क्रांति के माध्यम से सामंतों व पादरियों की जमीन पर अधिकार प्राप्त कर अपना धन प्राप्त करने की सोची। मध्यम वर्ग ने ही क्रांति में सर्वाधिक महत्वपूर्ण निभाई व क्रांति को नेतृत्व प्रदान किया।

इस प्रकार फ्रांस की क्रांति दो परस्पर विरोधी गुटों के संघर्ष का परिणाम थी। एक ओर राजनीतिक दृष्टिकोण से प्रभावशाली वर्ग (कुलीन वर्ग) था, जबकि दूसरी ओर आर्थिक दृष्टिकोण से प्रभावशाली वर्ग (मध्यम वर्ग) था। देश की राजनीति और सरकार पर प्रभुत्व कायम करने के लिए इन दोनों वर्गों में संघर्ष अनिवार्य था। फ्रांसीसी क्रांति वस्तुत: इसी संघर्ष का परिणाम थी।

- **आर्थिक कारण**

फ्रांस की आर्थिक स्थिति कमजोर थी। राज्य दिवालियापन की कगार पर था। फ्रांस की आर्थिक बदहाली के मुख्य कारण थे - विदेशी युद्ध, राजमहल के अपव्यय तथा दोषपूर्ण कर प्रणाली। लुई 15वें के समय हुए ऑस्ट्रिया के उत्तराधिकार युद्ध व सप्तवर्षीय युद्ध, लुई 16वें के समय में हुए अमेरिकी स्वतंत्रता में फ्रांस की भागीदारी से आर्थिक दशा जर्जर हो गई थी। उसी प्रकार सम्राट, साम्राज्ञी और उनके परिवार पर राज्य की अत्यधिक राशि खर्च की जाती थी। वर्साय का राजमहल राजकोष के लूटपाट का साधन माना जाता था।

दूसरी ओर फ्रांस में कर प्रणाली दोषपूर्ण थी। विशेषाधिकार वर्ग समस्त प्रकार के करों से मुक्त था, जबकि विशेषाविहिन वर्ग पर करों का आर्थिक बोझ था। कर वसूली की व्यवस्था भी ठेकेदारी पद्धति पर आधारित थी, जिससे राज्य को जनसाधारण से वसूले गए कर का पूरा हिस्सा प्राप्त नहीं हो पाता था। फ्रांस में सरकार आय के अनुसार व्यय करने की बजाय व्यय के अनुसार आय को निश्चित करती थी। राज्य ऋण के बोझ के तले दबता गया। मूल धन की तो बात ही क्या फ्रांस ब्याज चुकाने में असमर्थ था, अर्थात् राज्य दिवालियापन की स्थिति में पहुंच गया था।

देश की आर्थिक दुर्व्यवस्था को वाणिज्य-व्यापार को प्रोत्साहन देकर सुधारा जा सकता था, किन्तु सामंतवाद के कारण जगह-जगह चुंगी लगाई जाती थी तथा व्यापार पर ना-ना प्रकार के प्रतिबंध लगे हुए थे। लुई 16वें ने तुर्गो, नेकर, केलौन जैसे वित्त सलाहकारों के माध्यम से आर्थिक संकट को दूर करने का प्रयास किया, लेकिन ये सुधार प्रयास लागू नहीं हो सके, क्योंकि न तो राजमहल ने अपना व्यय कम करने और न ही विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग ने स्वयं पर कर लगाने की बात स्वीकार की। अन्तत: विशेषाधिकार उन्मूलन व एकसमान कर प्रणाली के प्रस्तावों को पारित करने हेतु इस्टेट जनरल की बैठक बुलाने की मांग की गई और 5 मई, 1789 ई. को इस्टेट जनरल की बैठक के साथ ही क्रांति का आगमन हुआ, इसलिए तत्कालीन आर्थिक दुर्दशा को फ्रांस की क्रांति का सबसे महत्वपूर्ण कारण माना जाता है।

- **बौद्धिक कारण (दार्शनिकों की भूमिका)**

फ्रांसीसी क्रांति में दार्शनिकों की भूमिका के संदर्भ में दो प्रकार के मत हैं - प्रथम, दार्शनिकों ने क्रांति की परिस्थितियों को जन्म देकर क्रांति को उत्पन्न किया और द्वितीय, क्रांति का मूल कारण उस समय के राष्ट्रीय जीवन के दोषों में व सरकार की भूलों में निहित था तथा दार्शनिकों ने क्रांति उत्पन्न नहीं की। वस्तुत: किसी भी मत पर निर्णय देने के पूर्व उन दार्शनिकों के विचारों और क्रांति के साथ उनके संबंधों को समझना आवश्यक है।

1) **मॉण्टेस्क्यू (1689 ई. - 1755 ई.)** - मॉण्टेस्क्यू ने अपनी पुस्तक 'The Spirit of Law' में राजा के दैवी अधिकारों के सिद्धान्तों का खण्डन किया और फ्रांसीसी राजनीतिक संस्थाओं की आलोचना ही नहीं की, वरन् विकल्प भी प्रस्तुत किया। उसने लिखा कि फ्रांसीसी सरकार निरंकुश सरकार है, क्योंकि फ्रांस में कार्यपालिका, न्यायपालिका और विधायिका संबंधी सभी शक्तियां एक ही व्यक्ति, अर्थात् - राजा के हाथों में केन्द्रित है। इसलिए फ्रांस की जनता को स्वतंत्रता प्राप्त नहीं है। इसी संदर्भ में उसने 'शक्ति के पृथक्करण' का सिद्धान्त दिया, जिसके अनुसार शासन के तीन प्रमुख अंग - कार्यपालिका, न्यायापालिका और विधायिका के मध्य शक्ति का विभाजन होना चाहिए। उसने इंग्लैण्ड के संवैधानिक राजतंत्र को आदर्श बताया, क्योंकि वहां नागरिकों को स्वतंत्रता थी। इस प्रकार मॉण्टेस्क्यू ने शक्ति के पृथक्करण के माध्यमसे फ्रांस की निरंकुश

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

राजव्यवस्था पर चोट की। यहां ध्यान रखने की बात यह है कि मॉण्टेस्क्यू ने न तो क्रांति की बात की और न ही राजतंत्र को समाप्त करने की। उसने तो सिर्फ निरंकुश राजतंत्र के दोषों को उजागर किया और संवैधानिक राजतंत्र की वकालत की।

2) **वाल्टेयर (1694 ई. - 1778 ई.)** - वाल्टेयर ने अपनी पुस्तक '**एदिप तथा खत**' के माध्मय से ब्रिटेन तथा फ्रांस की व्यवस्था की तुलना की और फ्रांस में व्याप्त बुराइयों एवं कमियों का उल्लेख किया। वाल्टेयर ने चर्च के भ्रष्टाचार व अत्याचार के विरोध में लिखा। चर्च की भ्रष्टता पर उंगली उठाते हुए उसने कहा कि अब तो कोई ईसाई बचा नहीं, क्योंकि एक ही ईसाई था और उसे सूली पर चढ़ा दिया गया। इस प्रकार वाल्टेयर ने फ्रांस के निरंकुश राजतंत्र एवं चर्च के अत्याचार पर प्रहार था। वह इंग्लैण्ड के संवैधानिक राजतंत्र के अनुरूप ही फ्रांस में भी वैसा ही शासन स्थापित करना चाहता था। वाल्टेयर के संदर्भ में भी यह कहा जा सकता है कि उसने कभी-भी क्रांति की बात नहीं की, लेकिन पुरातन फ्रांसीसी व्यवस्था की बुराइयों को उजागर किया तथा भ्रष्ट व निरंकुश तंत्र के विरुद्ध जनता को विरोध करने हेतु प्रेरित किया।

3) **रूसो (1712 ई. - 1778 ई.)** - रूसो ने अपनी पुस्तक 'सोशल कॉन्ट्रैक्ट' के माध्यम से मनुष्य की स्वतंत्रता की बात की। उसने कहा कि मनुष्य स्वतंत्र पैदा होते हुए भी सर्वत्र जंजीरों में जकड़ा हुआ है। इन जंजीरों से मुक्ति पाने का एक ही तरीका है कि हम प्राकृतिक आदिम व्यवस्था की ओर लौटे। रूसो ने कहा कि राज्य जनता की 'सामान्य इच्छा' (General Will) का परिणाम है। अत: सर्वोच्च शक्ति जनता मे निहित होती है, न की राज्य में। रूसो के अनुसार यदि राज्य जनता की इच्छाओं व उसकी भलाई हेतु कार्य न कर रहा हो, तो जनता का यह पवित्र कर्तव्य है कि वह इसका विरोध करें। हालांकि रूसो ने भी क्रांति की बात नहीं की, लेकिन सभी व्यक्तियों को स्वतंत्र एवं समान माना तथा अपने अधिकारों की रक्षा हेतु जनता को विरोध करने के लिए प्रेरित व प्रोत्साहित किया। वस्तुत: फ्रांसीसी क्रांति के नारे स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व उसी के विचारों से प्रभावित थे। नेपोलिन ने उसके महत्व को स्वीकार करते हुए कहा कि यदि रूसो नहीं होता, तो फ्रांस में क्रांति नहीं होती।

3) **दिदरो (1713 ई. - 1784 ई.)** - दिदरो ने 18वीं शताब्दी के श्रेष्ठ विचारकों की रचनाओं को Encyclopedia में संकलित कर आम जनता तक पहुंचाया। इसमें शासन की बुराइयों, चर्च की भ्रष्टता तथा हर क्षेत्र में व्याप्त असमानता को उजागर किया गया। फ्रांस की सरकार ने दिदरो को अपना घोर शत्रु माना और उसकी पुस्तक पर अनेक प्रतिबंध लगाए।

उपर्युक्त विचारकों/दार्शनिकों के अतिरिक्त फ्रांस में तुर्गों तुर्गों, क्वेसने, मिराबों आदि विचारकों ने फ्रांस में व्याप्त आर्थिक अव्यवस्था का विश्लेषण किया। क्वेसने मुक्त व्यापार का समर्थक था। वह व्यापारिक उत्पादन एवं वितरण की पूर्ण स्वतंत्रता तथा चुंगी कर व अन्य करों का विरोधी था। उसका तर्क था कि केवल भूमि सारी संपत्ति का मूल स्रोत है। अत: कर केवल भूमि पर लगाना चाहिए, व्यापारी एवं कारीगरों पर नहीं।

आलोचनात्मक मूल्यांकन - फ्रांसीसी क्रांति में दार्शनिकों की भूमिका के संदर्भ में इतिहासकारों का एक पक्ष यह मानता है कि दार्शनिकों ने क्रांति को उत्पन्न किया, बिना दार्शनिकों के क्रांति संभव नहीं थी। जैसा कि नेपोलियन ने भी कहा कि यदि रूसो न हुआ होता, तो फ्रांस की क्रांति भी नहीं होती, जबकि दूसरे पक्ष इतिहासकारों का मानना है कि क्रांति मे दार्शनकों की भूमिका नगण्य थी।

वस्तुत: क्रांति का स्रोत तो उस समय के राष्ट्रीय जीवन के दोषों में तथा सरकार की भूलों में निहित था। फ्रांस में राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक क्षेत्र में अव्यवस्था व्याप्त थी। कुलीन तंत्र व चर्च जनता के शोषण का उपकरण बन गए थे और राजतंत्र सब-कुछ चुप्पी साधे देख रहा था। वस्तुत: दार्शनिकों ने क्रांति हेतु उत्तरदायी भौतिक परिस्थितियों को निर्मित नहीं किया, बल्कि फ्रांस के राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था में निहित कमियों को प्रतिबिम्बित एवं प्रचारित किया। साथ ही वर्तमान व्यवस्था की आलोचना कर वैकल्पिक व्यवस्था का मार्ग सुझाया एवं जनता को अपने अधिकारों के पक्ष में विरोध करने हेतु प्रेरित व प्रोत्साहित किया। इस प्रकार क्रांति का कारण दार्शनिक नहीं थे, बल्कि तत्कालीन फ्रांस में व्याप्त कुरीतियां थीं।

वास्तव में फ्रांस में दार्शनिकों ने न तो क्रांति की बात की, न क्रांति के लिए कोई संगठन बनाया और न ही क्रांति का आह्वान किया। वे क्रांति के नहीं, बल्कि सुधारों के पक्षधर थे। इसी कारण राजतंत्र को उखाड़ फेकने की बजाय उन्होंने संवैधानिक राजतंत्र की बात की। फिर यह भी विचारणीय है कि इन दार्शनिकों के विचार उच्च वर्ग तक ही पहुंच पाते थे।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

जबकि बहुसंख्यक निम्न वर्ग इनके विचारों से अछूता था। फिर प्राय: फ्रांस की क्रांति में महत्वपूर्ण भूमिका के रूप में माने जाने वाले मान्टेस्क्यू, वाल्टेयर व रूसो भी क्रांति से बहुत पहले के दार्शनिक थे। अत: यह तथ्य तर्कसंगत प्रतीत नहीं होता कि दार्शनिकों क्रांति को उत्पन्न किया। इसके बावजूद दार्शनिकों की भूमिका को फ्रांसीसी क्रांति के संदर्भ में नजरंदाज करना इतिहास की दृष्टि से भूल होगी। उनकी भूमिका को इस अर्थ में समझा जा सकता है कि उन्होंने पुरातन व्यवस्था में व्याप्त कमियों को उजागर किया। इस प्रकार क्रांति हेतु मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि तैयार की। लोगों के समक्ष निरंकुश राजतंत्र व भ्रष्ट प्रशासनिक तंत्र की जगह नवीन विकल्प सुझाया तथा जनता को अत्याचारों का विरोध करने हेतु प्रेरित किया। इस तरह दार्शनिकों ने क्रांति की मानसिक पृष्ठभूमि तैयार की।

निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि ब्रिटिश तथा अमेरिकी क्रांतियों की तरह फ्रांसीसी क्रांति भी उन तनावों तथा समस्याओं के कारण प्रारम्भ हुई थी, जो तत्कालीन समाज में व्याप्त थी। दार्शनिकों ने क्रांति के नेताओं को नेतृत्व प्रदान करने में भूमिका निभाई और इनका महत्व इस बात में है कि उन्होंने क्रांति के दौरान प्रचलित नारों – स्वतंत्रता, समानता व बंधुत्व को जनता के बीच प्रचारित किया। साथ ही क्रांति के पश्चात् जो संवैधानिक परिवर्तन हुए उनमें भी दार्शनिकों के विचारों और भावनाओं को ही अभिव्यक्ति मिली।

- **तात्कालिक कारण**

लुई 16वें के काल तक आते-आते फ्रांस की वित्तीय व्यवस्था ऋणों में डूब चुकी थी। अमेरिकी स्वतंत्रता संग्राम ने फ्रांस के दिवालिएपन पर मुहर लगा दी। अत: आर्थिक दुरावस्था को दूर करने के क्रम में तुर्गो, नेकर, कोलोन जैसे अर्थशास्त्रियों की मदद ली। कोलोन ने विशेषाधिकार प्राप्त कुलीन वर्ग पर कर लगाने का सुझाव दिया, जिसे कुलीनों ने अस्वीकार कर दिया। अन्तत: 5 मई, 1789 ई. में स्टेस्ट्स जनरल की बैठक बुलाई गई तथा नेकर को पुन: वित्त मंत्री बना दिया गया। इस्टेट जनरल की बैठक का समाचार सुनकर सभी वर्ग उत्साहित थे। कुलीनों को उम्मीद थी कि इस बैठक में वे उन विशेषाधिकारों को प्राप्त कर सकेंगे, जो लुई 14वें के समय उनसे छीन लिए गए थे। मध्यम वर्ग के लोगों का मानना था कि वे अपने पक्ष में प्रगतिशील नीतियों का निर्धारण करवा सकेंगे। किसानों को आशा थी कि वह सामंती विशेषाधिकारों के विरुद्ध आवाज उठाकर उनके शोषण चक्र से मुक्त हो सकेंगे। इस तरह फ्रांसीसी राजतंत्र का समर्थन करने के लिए फ्रांसीसी जनसंख्या का कोई महत्वपूर्ण भाग तैयार नहीं था।

स्टेट्स जनरल के अधिवेशन में मताधिकार पद्धति के मुद्दे पर तृतीय स्टेट एवं अन्य स्टेट्स के बीच विवाद हो गया। तृतीय स्टेट का मानना था कि मताधिकार का आधार तीनों स्टेट्स की कुल संख्या का बहुमत होना चाहिए, जबकि प्रथम व द्वितीय स्टेट्स का कहना था कि मताधिकार चेम्बर का बहुमत होना चाहिए। अंत में यह विवाद बढ़ता चला गया और 17 जून, 1789 ई. में तृतीय स्टेट ने इस्टेट जनरल का बहिष्कार कर स्वयं को समस्त राष्ट्र की एकमात्र प्रतिनिधि मानते हुए राष्ट्रीय सभा के रूप में घोषित कर दिया और पास के टेनिस कोर्ट में अपनी सभा बुलाई।

20 जून, 1789 ई. को राष्ट्रीय सभा ने यह घोषणा की कि "हम कभी अलग नहीं होंगे और जब तक संविधान नहीं बन जाता तब तक साथ में बने रहेंगे।" अन्तत: 27 जून को लुई 16वें ने तीनों वर्गों के प्रतिनिधियों को संयुक्त बैठक की अनुमति दे दी। यह जनसाधारण की प्रथम विजय थी। इस प्रकार इस्टेट जनरल राष्ट्रीय सभा (National Assembly) बन गई और उसे राजा की मान्यता मिल गई और वह वैधानिक हो गई। सभा ने 9 जुलाई, 1789 को स्वयं को संविधान सभा (Constituent Assembly) घोषित करके देश के संविधान का निर्माण करना अपना सर्वप्रमुख लक्ष्य बनाया।

इसी समय लुई 16वें ने अर्थमंत्री नेकर को बर्खास्त कर दिया, जिसे जनता अपना समर्थक मानती थी। उसी प्रकार राजा ने सैनिकों को पेरिस व वार्साय की ओर भेजकर क्रांतिकारियों को भयभीत करने का प्रयास किया, जिससे क्रांतिकारियों को यह लगा कि राजा क्रांति को कुचलने का प्रयास कर रहा है। उसी समय यह खबर फैल गई कि बास्तील के किले में राजा ने शास्त्रों का भंडार जमा कर रखा है। अत: 14 जुलाई, 1789 को पेरिस की भीड़ ने बास्तील के किले पर हमला कर उसे नष्ट कर दिया तथा कैदियों को मुक्त कर दिया। वस्तुत: यही क्रांति की शुरुआत थी। बास्तील का पतन एक युगांतकारी घटना थी, जो राजतंत्र की निरंकुशता का पतन एवं जनता की विजय का प्रतीक मानी गई। 14 जुलाई को राष्ट्रीय दिवस के रूप में मनाया गया और यह परम्परा वर्तमान में भी बनी हुई है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

- **क्रांति फ्रांस में ही क्यों?**

यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि जब समस्त यूरोप की व्यवस्था सामान्य रूप से चरमरा रही थी, तो क्रांति फ्रांस में ही क्यों हुई? वस्तुत: यूरोपीय राष्ट्रों में केवल फ्रांस में ही क्रांति की स्थितियां मौजूद थी। इसे निम्नलिखित बिन्दुओं के तहत समझा जा सकता है –

- यूरोप में फ्रांस ही ऐसा देश था, जहां एक राष्ट्रीय राज्य की स्थापना हो चुकी थी। लुई 13वें के समय रिशलू ने तथा लुई 14वें ने केन्द्रीय सत्ता को शक्तिशाली बनाया था तथा प्रशासन का केन्द्रीकरण किया था। इसके परिणामस्वरूप फ्रांस के किसी भी भाग में उत्पन्न होने वाले असंतोष का कारण केन्द्र की सर्वोच्च सत्ता, अर्थात् – राजा को ही मान जाता था, जबकि अन्य यूरोपीय देशों में ऐसा नहीं था।
- क्रांति से पूर्व फ्रांस के अतिरिक्त अन्य यूरोपीय देशों में निरंकुश राजाओं के साथ-साथ कुछ प्रबुद्ध शासक भी हुए जैसे – प्रशा में फ्रेडरीक महान, ऑस्ट्रिया में जोसफ द्वितीय, रूस में केथराइन महान, स्पेन में चार्ल्स तृतीय आदि। इन राजाओं ने प्रजा के हित में कई महत्वपूर्ण कार्य किए तथा प्रजा के दीर्घकालिक कष्टों को कुछ कम करने का सफलतापूर्वक प्रयास किया। इसके विपरीत फ्रांस में कोई भी ऐसा प्रबुद्ध शासक नहीं हुआ, जो अपनी प्रज्ञा के हित में कुछ सुधार कार्य किए हो। अत: फ्रांस में निरंकुश राजाओं की अनवरत श्रृंखला का विरोध होना स्वाभाविक था।
- फ्रांस में पादरी और कुलीन वर्ग विशेषाधिकारों का दुरुपयोग करते थे, वे अपना दायित्व नहीं निभाते थे। फलत: वे समाज पर अनावश्यक बोझ बन गए। अत: सामान्य जनता उनसे क्षुब्ध थी, जबकि अन्य यूरोपीय देशों में पादरी और सामंत अपने विशेषाधिकारों का प्रयोग करते हुए शासन चलाने में राजा की मदद करते थे।
- अन्य यूरोपीय देशों की तुलना में फ्रांस के सामंत वर्ग के साथ कुछ नवीन तथ्य जुड़े हुए थे। वस्तुत: रिशलू व लुई 14वें के द्वारा सामंतों के कई विशेषाधिकारों को समाप्त दिया गया था। अत: फ्रांस में सामंत वर्ग भी राजतंत्र का विरोध कर अपने खोए हुए विशेषाधिकारों को पुन: प्राप्त करना चाहता था, जबकि अन्य यूरोपीय राष्ट्रों में राजाओं को प्राय: सामंत वर्ग का समर्थन प्राप्त था। उसी प्रकार फ्रांस में सामंत प्राय: वार्साय के महल में रहते थे, जिसके दो दुष्परिणाम हुए – प्रथम, क्षेत्रीय स्तर पर कृषकों के विद्रोह की स्थिति में सामंत राजा हेतु द्वितीय सुरक्षा पंक्ति का कार्य नहीं कर सके। द्वितीय, कृषक वर्ग जब अपनी समस्याओं को लेकर सामंतों के बीच वार्साय जैसे शहर में आता था, तो वह अपने गांव व शहर के बीच सुख-सुविधाओं में अन्तर देखता था, जिससे उसके मन में दु:ख एवं असंतोष और अधिक बढ़ता था।
- अन्य यूरोपीय राष्ट्रों की तुलना में फ्रांस का मध्यम वर्ग आर्थिक रूप से अधिक सक्षम था। फ्रांस की सरकार इन बुर्जुवाओं से ऋण भी लेती थी, लेकिन पादरियों एवं कुलीनों के विशेषाधिकारों से इन्हें चिढ़ थी। इसलिए फ्रांसीसी क्रांति में सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका मध्यम वर्ग ने निभाई तथा क्रांति का नेतृत्व संभाला।
- अन्य यूरोपीय देशों रूस, जर्मनी आदि के किसानों की तुलना में फ्रांस का किसान अपेक्षाकृत अधिक स्वतंत्र, समृद्ध व जागरूक था। इस तरह फ्रांसीसी कृषकों की अपेक्षाकृत अच्छी दशा तथा इसे सुधारने की अभिलाषा ने उन्हें क्रांति की ओर प्रेरित किया।
- अन्य यूरोपीय राष्ट्रों की तुलना में फ्रांस के जनमानस को क्रांति हेतु मान्टेस्क्यू, वाल्टेयर व रूसो जैसे दार्शनिकों ने प्रेरित व प्रोत्साहित किया था।
- फ्रांस के सैनिकों ने अमेरिका के स्वतंत्रता संग्राम में भाग लिया था। वहां उन्हें इस बात का अनुभव हुआ कि क्रांति से वे अपने अधिकारों को प्राप्त कर सकते हैं। अपने देश में आकर उन्होंने इन अधिकारों की प्राप्ति और समानता की बात उठाई।
- अन्य यूरोपीय राष्ट्रों की तुलना में फ्रांस की राजधानी पेरिस राजनीतिक व प्रशासनिक जीवन की धुरी थी। पेरिस के संदर्भ में कहा जाता था कि यदि पेरिस को जुकाम होता है, तो सम्पूर्ण यूरोप छींकता है। इस प्रकार पेरिस की एक छोटी-सी हलचल सम्पूर्ण फ्रांस को प्रभावित करती थी। अत: जब क्रांतिकारी सेनाओं ने पेरिस पर अधिकार कर लिया, तो सम्पूर्ण फ्रांस में क्रांति हो गई।

कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि अन्य यूरोपीय राष्ट्रों की तुलना में क्रांति हेतु सबसे उर्वर भूमि फ्रांस में ही मौजूद थी। इस प्रकार 18वीं सदी में यदि क्रांति का विस्फोट फ्रांस में हुआ, तो इसमें कुछ भी अस्वाभाविक और विस्मयकारी नहीं था।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

❐ फ्रांस की क्रांति के विभिन्न चरण

फ्रांसीसी क्रांति विभिन्न चरणों से होते हुए अपने मुकाम तक पहुंची। अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से क्रांति को निम्नलिखित चार चरणों में बांटकर देखा जा सकता है –

- ➢ प्रथम चरण (1789 ई. – 1792 ई.) संवैधानिक राजतंत्र का चरण।
- ➢ द्वितीय चरण (1792 ई. – 1794 ई.) आतंक का राज्य/उग्र गणतंत्रवाद का चरण।
- ➢ तृतीय चरण (1794 ई. – 1799 ई.) डायरेक्टरी का युग/उदार गणतंत्रवाद का चरण।
- ➢ चतुर्थ चरण (1799 ई. – 1814 ई.) नेपोलियन युग/तानाशाही/साम्राज्यवादी चरण।

• प्रथम चरण (1789 ई. – 1792 ई.) संवैधानिक राजतंत्र का चरण

इस चरण में पेरिस की भीड़ ने 14 जुलाई, 1789 ई. में बास्तील के किले का पतन कर दिया, इस तरह क्रांति की शुरुआत हुई। वस्तुत: बास्तील का किला निरंकुशता एवं अत्याचार का प्रतीक था और इसके पतन से पुरातन व्यवस्था ध्वस्त हो गई। इस घटना का प्रभाव फ्रांस के ग्रामीण क्षेत्रों में भी पड़ा और ग्रामीणों ने सामंती करों के अभिलेखों को आग लगा दी। जनता की इन कार्यवाहियों से राष्ट्रीय सभा पर भी गहरा असर पड़ा। अत: 4 अगस्त, 1789 को राष्ट्रीय सभा (National Assembly) का अधिवेशन रातभर चला, जिसमें कानून निर्मित करके सभी विशेषाधिकारों तथा सामंतवाद को समाप्त कर दिया गया। 4 अगस्त की आज्ञाप्तियां बिना राजा की स्वीकृति के कानूनी शक्ल नहीं ले सकती थी। अफवाहों का बाजर गर्म था। लोगों को संदेह हुआ कि राजा क्रांति के दमन के लिए वार्साय में सेना एकत्र कर रहा है तथा भोजों पर बेहिसाब धन व्यय किया जा रहा है। वहीं दूसरी ओर जनता भूख और अकाल से त्रस्त थी। परिणामस्वरूप 5 अक्टूबर को पेरिस से भीड़ '**हमें रोटी दो**' के नारे के साथ वार्साय पहुंची तथा राजा व रानी को पेरिस आने के लिए बाध्य किया। 6 अक्टूबर को राजा व उसका परिवार पेरिस आ गया, यहां राजा की स्थिति एक कैदी के समान हो गई।

इस बीच राष्ट्रीय सभा ने संविधान बनाने का कार्य जारी रखा। अत: राष्ट्रीय सभा ही संविधान सभा (Constituent Assembly) कहलाई और 26 अगस्त, 1789 को संविधान सभा ने मानवाधिकारों की घोषणा की।

1) **मानवाधिकारों की घोषणा** – इस घोषणा में निम्नलिखित बातों पर विशेष बल दिया गया था –

- ➢ मनुष्य के कुछ नैसर्गिक अधिकार है, जो जन्म से ही उसे प्राप्त हो जाते हैं। जैसे – अपनी सुरक्षा का अधिकार, संपत्ति का अधिकार आदि। इस प्रकार व्यक्तिगत संपत्ति की सुरक्षा की गारंटी दी गई।
- ➢ राज्य का जन्म व्यक्तियों के सामूहिक प्रयत्नों का फल है, इसलिए शासन एवं विधि निर्माण में सभी नागरिकों को स्वयं या अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से भाग लेने का अधिकार है।
- ➢ योग्यता के आधार पर सभी मनुष्य सरकारी पद प्राप्त करने के अधिकारी हैं। किसी को भी गैर–कानूनी ढंग से गिरफ्तार नहीं किया जाएगा।
- ➢ सभी को धर्म और विचार के प्रसारण की स्वतंत्रता होगी।
- ➢ राज्य के समस्त पदाधिकारी जनता के प्रति उत्तरदायी होंगे।

इस प्रकार फ्रांस के इतिहास में पहली बार संवैधानिक राजतंत्र की स्थापना की गई, जिसमें सर्वोच्च शक्ति जनता के द्वारा चुनी गई विधायिका में निहित थी। साथ ही प्रथमत: फ्रांसीसी नागरिकों हेतु स्वतंत्रता, समानता व भ्रातृत्व के सिद्धान्तों की घोषणा की थी। इन सबके बावजूद मानवाधिकारों की घोषणा की कुछ सीमाएं भी थीं।

मानवाधिकारों की सीमाएं

- ➢ इसमें अधिकारों की घोषणा तो थी, परन्तु कर्तव्यों की घोषणा का उल्लेख नहीं था।
- ➢ इसमें मध्यम वर्ग के हितों को ही ध्यान में रखते हुए व्यक्तिगत संपत्ति के अधिकार को सुरक्षा प्रदान की गई थी।
- ➢ साधारण वर्ग को रोजी–रोटी दिलाने का कोई आश्वासन नहीं दिया गया।
- ➢ व्यापार तथा व्यवसाय की स्वतंत्रता के विषय में कोई बात नहीं की गई।
- ➢ सार्वजनिक शिक्षा के विषय में कुछ नहीं कहा गया था।

इन सीमाओं के बावजूद फ्रांस में मानवाधिकारों की घोषणाओं का विश्वव्यापी महत्व था। दुनिया के किसी भी भाग में इसे लागू

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

किया जा सकता था, किसी भी देश में निरंकुश राजतंत्र या सामंती विशेषाधिकारों से मुक्ति पाने हेतु इसका लाभ उठाया जा सकता था। पूरी 19वीं सदी में इसे उदारता का चार्टर समझा गया तथा फ्रांसीसी इतिहास में वही महत्व प्राप्त हुआ, जो इंग्लैण्ड में मेग्नाकार्टा तथा अमेरिका में स्वतंत्रता की घोषणा का था। वस्तुत: कागज का यह टुकड़ा नेपोलियन की सेना से भी अधिक शक्तिशाली साबित हुआ।

2) चर्च पर नियंत्रण –

- राष्ट्रीय संविधान सभा ने चर्च के विशेषाधिकारों को समाप्त कर उसकी संपत्ति को जब्त कर लिया। चर्च को राज्य के अधीन लाया गया तथा उसे रोम के पोप के प्रभाव से मुक्त कर राष्ट्रीय चर्च के रूप में तब्दील कर दिया गया।
- पादरियों की वफादरी राज्य के प्रति सुरक्षित करने के लिए सिविल कांस्टीच्यूशन ऑफ क्लर्जी बनाया गया। इसके अनुसार पादरियों को राज्य के प्रति निष्ठा की शपथ लेनी पड़ती थी और जनता के द्वारा उनका चुनाव होता था। पोप और कुछ पादरियों ने इस कदम का विरोध किया। जिन पादरियों ने राज्य के प्रति निष्ठा की शपथ ग्रहण की वे ज्यूरर कहलाए, जबकि शपथ नहीं लेने वाले नॉन ज्यूरर कहलाए।

इस कानून से क्रांति के विरुद्ध एक माहौल निर्मित होने लगा, क्योंकि अभी तक छोटे पादरियों ने क्रांति का समर्थन किया था। अब वे इससे अलग हो गए और कुछ पादरी देश छोड़ विदेशों में चले गए और वहां यूरोप में क्रांति के विरुद्ध प्रचार करने लगे।

3) 1791 ई. का संविधान निर्माण –

राष्ट्रीय संविधान सभा ने 1791 ई. में फ्रांस के इतिहास में पहली बार संविधान का निर्माण किया। नए संविधान में दो बातों पर बल दिया गया – एक, राज्य की सार्वभौम शक्ति जनता में निहित है और दूसरी, शक्ति का पृथक्करण राज्य एवं जनता के हित में है।

शक्ति का विभाजन कार्यपालिका, विधायिका तथा न्यायपालिका के मध्य किया गया। कार्यपालिका शक्ति का प्रमुख राजा होता था, किन्तु उसके अधिकार सीमित कर दिए गए। अब उसे कानून निर्माण करने, किसी देश से युद्ध या संधि की घोषणा करने के अधिकार से वंचित कर दिया था।

विधायी शक्तियां 745 सदस्यीय व्यवस्थापिक सभा के पास थी। व्यवस्थापिका के सदस्यों के निर्वाचन के लिए नागरिकों को सक्रिय और निष्क्रिय दो भगाों में विभक्त किया गया और मताधिकार केवल सक्रिय नागरिकों को दिया गया। सक्रिय नागरिक 25 वर्ष से अधिक आयु के वे लोग थे, जो राज्य को तीन दिन की आय के बराबर प्रत्यक्ष कर देते थे, जबकि निष्क्रिय नागरिक वे थे, जो गरीब थे।

उसी प्रकार न्यायिक शक्तियां न्यायपालिका को दी गई, जिसके सदस्यों का चयन योग्यता के आधार पर नहीं, बल्कि चुनाव के आधार पर किया जाता था।

इस प्रकार इस नवीन संविधान में यद्यपि कई सकारात्मक परिवर्तन किए गए तथा फ्रांस में राजतंत्र की बजाय संवैधानिक राजतंत्र की स्थापना की गई। इसके बावजूद इसकी कुछ सीमाएं भी थीं, जैसे – अभी–भी विधायिका के सदस्यों का चयन संपत्ति के आधार पर किया जाता था। साथ ही न्यायपालिका के न्यायाधीश भी योग्यता के बजाय चुनाव के माध्यम से चुने जाते थे। इस प्रकार नवीन संविधान में भी मध्यम वर्ग का प्रभाव स्पष्टत: दिखाई देता है।

- **राष्ट्रीय सभा/संविधान सभा के कार्यों का मूल्यांकन (प्रथम चरण की समीक्षा)**

प्रथम चरण में राष्ट्रीय सभा ने कुछ महत्वपूर्ण कार्य किए, जैसे – सामंती विशेषाधिकारों का अंत, मानवाधिकारों की घोषणा, चर्च की संपत्ति का राष्ट्रीयकरण, लिखित संविधाना के माध्यम से संवैधानिक राजतंत्र की स्थापना आदि। इसके बावजूद राष्ट्रीय सभा के कुछ कार्य अत्यन्त दोषपूर्ण थे –

1) जनता के अधिकारों की घोषणा की गई, कर्तव्यों की नहीं।

2) सक्रिय एवं निष्क्रिय नागरिकों के रूप में समाज को विभक्त कर भेदभाव किया गया। केवल सक्रिय नागरिकों को मताधिकार देकर मताधिकार को सीमित रखा गया। इस तरह समानता के नारे का उल्लंघन हुआ।

3) संविधान सभा ने नवनिर्मित व्यवस्थापिका को अपने अनुभवों से वंचित कर दिया, क्योंकि संविधान सभा का कोई सदस्य व्यवस्थापिका सभा का सदस्य निर्वाचित नहीं हो सकता था।

इन कमियों के कारण राष्ट्रीय सभा ने अपने महत्व को खो दिया और क्रांति के स्थायित्व को ठेस लगी। फलत: क्रांति दूसरे चरण में प्रवेश कर गई।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

- **द्वितीय चरण (1792 ई. - 1794 ई.) आंतक का राज्य/उग्र गणतंत्रवाद का चरण**

राष्ट्रीय सभा के भंग होने के पश्चात् 1791 ई. में 745 सदस्यीय व्यवस्थापिका सभा (Legislative Assembly) अस्तित्व में आई थी। इस व्यवस्थापिका सभा में अध्यक्ष के दायीं ओर बैठक वाले दक्षिणापंथी कहलाए, ये लोग अनुदार एवं राजतंत्र के समर्थक थे। जबकि बायीं ओर बैठने वाले वामपंथी कहलाए, जो उग्र, क्रांतिकारी, परिवर्तनवादी (Radical) एवं गणतंत्र के समर्थक थे। परिवर्तनवादी भी दो वर्गों में बंटे थे - जिरोंदिस्त और जैकोबियन।

इस बीच फ्रांसीसी क्रांति के नारे स्वतंत्रता, समानता व भ्रातृत्व का प्रसार यूरोप के अन्य देशों में भी होने लगा। इससे यूरोप के अन्य राजा जहां राजतंत्र था, आशंकित हुए। साथ ही क्रांति के दौरान जो कुलीन तथा पादरी यूरोप के अन्य देशों में चले गए थे, वे भी विदेशों में क्रांति के विरोध में जनमत तैयार कर रहे थे। परिणामस्वरूप फ्रांस तथा यूरोप के अन्य राष्ट्रों के मध्य युद्ध की संभावनाएं दिखाई देने लगी। 20 अप्रैल, 1792 ई. को प्रशा एवं ऑस्ट्रिया ने पिलनित्ज की संयुक्त घोषणा द्वारा फ्रांस में पुनः राजतंत्र स्थापित करने हेतु युद्ध की घोषणा कर दी। इस दौरान हुए युद्ध में फ्रांस की सेना बुरी तरह पराजित हुई। इस पराजय से फ्रांस की जनता को विश्वास हो गया कि राजा ने ऑस्ट्रिया को फ्रांस की सैन्य शक्ति और सुरक्षा के सारे भेद बता दिए हैं। अतः राजा के प्रति जनता का रवैया उग्र हो गया।

इसी बीच 20 जून, 1792 ई. को लुई 16वां अपने परिवार के साथ ऑस्ट्रिया सीमा पार करने के प्रयास में पकड़ा गया। इससे राजा को क्रांति विरोधी माना गया। अब यह विचार किया जाने लगा कि व्यवस्थापिका सभा भंग की जाए, पुनः चुनाव हो, नई व्यवस्थापिका सभा बने और वह राजतंत्र के भविष्य पर अपना निर्णय दे। इसी के साथ व्यवस्थापिका सभा को भंग कर वयस्क मताधिकार के आधार पर राष्ट्रीय कन्वेशन का गठन हुआ।

नेशनल कन्वेंशन और आतंक का राज्य

21 सितम्बर, 1792 ई. को नेशनल कन्वेंशन का प्रथम अधिवेशन हुआ। इसमें जैकोबियन एवं जिरोंदिस्त दल प्रमुख थे। जैकोबियन अधिक अनुशासित व संगठित थे, उन्हें पेरिस की भीड़ का भी अधिक समर्थन प्राप्त था। जैकोबियन दल के प्रमुख नेता थे - मारा, दांते, रॉबस्पियर आदि। दूसरी तरफ जिरोंदिस्त थे, जो यद्यपि सुशिक्षित थे, इन्हें किताबी ज्ञान अधिक, किन्तु व्यावहारिक राजनीति का ज्ञान कम था। जिरोंदिस्त दल के प्रमुख नेता थे - मादाम रोलां, बुजों, ब्रिसट आदि।

यद्यपि ये दोनों गुट गणतंत्र तथा विदेशी युद्ध के समर्थन थे। किन्तु जिरोंदिस्तों का मानना था कि क्रांति बहुत आगे जा चुकी है और उसका अंत होना चाहिए, वे पूर्ण सामाजिक समानता के विरुद्ध थे तथा मुक्त व्यापार के समर्थक होने के कारण समानता की बजाय स्वतंत्रता को अधिक महत्व देते थे। साथ ही जिरोंदिस्त नेता राजा को फांसी दी जाए या नहीं? इस मुद्दे पर टालमटोल कर रहे थे। इस संबंध में उनकी कोई स्पष्ट नीति नहीं थी। इसके विपरीत जैकोबियनों का मानना था कि क्रांति को एक धक्का और लगाना चाहिए, वे समानता के अधिक पक्षधर थे। राजा को फांसी देने के संबंध में भी उनका मत स्पष्ट था कि राजा ने देशद्रोह किया है, अतः उसे फांसी दी जानी चाहिए।

नेशनल कन्वेंशन के समक्ष कठिनाइयां

National Convention के सामने तीन प्रमुख समस्याएं थीं - विदेशी आक्रमण, राजा की मौजूदगी और गृह-युद्ध। फ्रांसीसी क्रांतिकारियों ने 1792 ई. में घोषणा कर दी कि फ्रांस का गणतंत्र स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व की भावनाओं पर आधारित है और इन भावनाओं का प्रसार करना वह अपना कर्तव्य समझता है। फ्रांस जिन जगहों पर आधिपत्य कायम करेगा, वहां क्रांतिकारी सिद्धान्तों को लागू किया जाएगा और पादरियों व कुलीनों की संपत्ति छीनी जाएगी। साथ ही जो भी देश इसका विरोध करेगा, उसे क्रांति का शत्रु समझा जाएगा। इस घोषणा से यूरोप के निरंकुश राजतंत्री देश भयभीत होकर एकजुट हो गए। इंग्लैण्ड, हॉलैण्ड, ऑस्ट्रिया, प्रशा के एकगुट का फ्रांस के विरुद्ध निर्माण हुआ। इस गुट ने कई जगहों पर फ्रांस को पराजित किया। फलतः विदेशी युद्ध में फ्रांस की पराजय नेशनल कन्वेंशन के समक्ष एक मुख्य समस्या बन गई।

National Convention ने एक प्रस्ताव पारित कर राजतंत्र को समाप्त किया और गणतंत्र की स्थापना की। राजा पर देशद्रोह का मुकदमा चलाया गया और मृत्युदण्ड की सजा दी गई। राजा के वध के प्रश्न पर जिरोंदिस्तों की नीति स्पष्ट नहीं थीं। वे राजतंत्र के विरोधी तो थे, लेकिन वध के प्रश्न पर जनमत संग्रह की बात कर रहे थे। इसके विपरीत जैकोबोयिन्स का मत था कि राजा का दशेद्रोह सिद्ध हो चुकी है। अतः उसे मृत्युदण्ड दिया जाना चाहिए। अन्ततः 21 जनवरी, 1793 को लुई 16वां को फांसी पर चढ़ा दिया गया।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

National Convention को जैकोबियन और जिरोंदिस्तों के बीच संघर्ष की समस्या का भी सामना करना पड़ा। वस्तुत: युद्ध के कारण फ्रांस आर्थिक संकट से घिर गया था, कीमते बढ़ गई थी, जिससे कन्वेंशन ने राहत देने के लिए विधान बनाया। फ्रांस के उपनिवेशों में दास प्रथा समाप्त कर दी गई, माप-तौल की नई मैट्रिक प्रणाली लागू की गई, खाद्यानों व अन्य आवश्यक सामग्रियों हेतु अधिकतम मूल्य निर्धारित किए गए, अमीरों पर युद्ध कर व आय कर लगाया गया। इन समस्त कदमों का जिरोंदिस्तों ने विरोध किया था, जबकि जैकोबियनों ने समर्थन। इससे पेरिस की भीड़ पर जैकोबियनों का प्रभाव बढ़ गया था। इसका लाभ उठाते हुए जैकोबियो ने जिरोंदिस्तों पर अक्षमता व देशद्रोह का आरोप लगाकर उन्हें सत्ता से बाहर कर दिया तथा नेशनल कन्वेंशन पर एकाधिकार स्थापित कर लिया। इस प्रकार जैकोबियनों ने अपने विरोधी जिरोंदिस्तों को क्रांति विरोधी प्रमाणित कर उन्हें समाप्त करने के लिए आंतक के राज्य (Age of Terror) की स्थापना की।

'आतंक के राज्य' की स्थापना के साथ ही फ्रांस एक बार पुन: अव्यवस्था का शिकार हुआ। रॉबस्पियर के नेतृत्व में इसकी स्थापना की गई थी। इसमें क्रांतिकारी न्यायालय, जनसुरक्षा समिति की स्थापना की गई थी और जो कोई जैकोबियन्स के विरुद्ध काम करता उसे मृत्युदण्ड की सजा दी जाती। रॉबस्पियर ने सत्ता पर नियंत्रण रखने के लिए विरोधियों को 'गिलोटिन' (फांसी) पर चढ़ा दिया। अत: सभी व्यक्ति अपने जीवन को लेकर सशंकित हो उठे। अन्तत: जुलाई, 1794 में रॉबस्पियर कैद कर लिया गया, उसे फांस दे दी गई। इसी के साथ आतंक के राज्य की समाप्ति हुई।

आतंक के राज्य के बाद 'थर्मिदोरियन प्रतिक्रिया' (Thermidorian Reaction) हुई। उदारवादी थर्मिदोरियन नेताओं ने देश की सत्ता संभाली और आतंक के राज्य की व्यवस्थाओं को भंग किया। जैकोबियन दल को अवैध घोषित कर दिया गया। आतंक के शासन के दौरान लगाए गए मूल्य तथा पारिश्रमिक पर से नियंत्रण उठा लिया गया, जिससे कीमते पुन: बढ़ गई, सट्टेबाजों का प्रभाव बढ़ गया और प्रतिक्रिया स्वरूप विद्रोह हुए, लेकिन इन विद्रोह को दबा दिया गया।

- **नेशनल कन्वेंशन के कार्य**

1) राष्ट्रीय शिक्षा नीति अपनाई गई और 'फ्रेंच' राष्ट्रभाषा घोषित की गई।
2) गुलामी प्रथा समाप्त कर दी गई तथा ऋण न चुकाने पर जेल भेजने संबंधी कानून समाप्त किए गए।
3) सबसे बड़े पुत्र को ही उत्तराधिकार देने का कानून समाप्त कर पारिवारिक जीवन में समानता को स्थापित किया गया।
4) राजतंत्र को समाप्त कर गणतंत्र की स्थापना की गई और गणतंत्र की स्थापना दिवस से एक नया पंचाग (22 सितम्बर, 1792) लागू किया गया।
5) माप-तौल की नई पद्धति शुरू की गई।
6) राशनिंग व्यवस्था प्रारंभ की गई व वस्तुओं की अधिकतम कीमते निश्चित की गई।
7) मुआवजा देने की नीति समाप्त कर दी गई। धनवानों पर आय कर तथा युद्ध कर लगाया गया।
8) धर्म के मामले में राज्य ने अपने को धर्मनिरपेक्ष घोषित किया और पादरियों को कोई मान्यता नहीं दी।

- **तृतीय चरण (1794 ई. - 1799 ई.) डायरेक्टरी का युग/उदार गणतंत्रवाद का चरण**

वस्तुत: नेशनल कन्वेंशन ने एक संविधान का निर्माण कर कार्यपालिका का उत्तरदायित्व 5 सदस्यीय निदेशकमण्डल को सौंपा। मण्डल के सभी सदस्यों के अधिकार बराबर थे। प्रत्येक सदस्य बारी-बारी से तीन महीने के लिए अध्यक्ष हुआ करता था। प्रत्येक वर्ष एक सदस्य का कार्यकाल समाप्त होना था और उसके बदले दूसरे सदस्य की नियुक्ति की जानी थी। इस तरह नेशनल कन्वेंशन के बाद फ्रांस में डायरेक्टरी का शासन शुरू हुआ, जो 1795 ई. से 1799 ई. तक चला।

डायरेक्टरी के सामने सबसे प्रमुख समस्या थी युद्ध की समस्या, जबकि डायरेक्टरी के सदस्य अनुभवहीन, अयोग्य तथा भ्रष्ट थे। अत: डायरेक्टरी के शासनकाल में तरह-तरह की गड़बड़ी फैली, बेकारी बढ़ी, व्यापार-व्यवसाय ठप्प पड़ गया और उसकी विदेशी नीति भी कमजोर रही। ऐसी स्थिति में फ्रांस की जनता एक ऐसे शासक (नेतृत्व) की आवश्यकता महसूस कर रही थी, जो देश के अन्दर और बाहर शांति स्थापित कर सके तथा विदेशी शक्तियों को परास्त कर सके। इस काल में नेपोलियन ने सैन्य विजयों द्वारा फ्रांस के सम्मान को स्थापित किया और अंतत: डायरेक्टरी के शासन का अंत कर सत्ता पर नियंत्रण स्थापित किया।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

- **चतुर्थ चरण (1799 ई. - 1814 ई.) नेपोलियन युग/तानाशाही/साम्राज्यवादी चरण**

1799 ई. में नेपोलियन ने डायरेक्टरी के शासन का अंत किया और फ्रांस का प्रथम काउन्सल बना और 1804 ई. में उसने अपने को सम्राट घोषित कर दिया और इस तरह नेपोलियन के तानाशाही साम्राज्यवादी शासन की शुरुआत हुई।

❐ फ्रांसीसी क्रांति - परिणाम/प्रभाव/उपलब्धियां

फ्रांसीसी क्रांति का प्रभाव यूरोप तक ही सीमित न रहा, बल्कि इसने समस्त विश्व को प्रभावित किया। क्रांति के नारे - स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व का प्रसार पूरे यूरोप में हुआ। एक तरफ इसने जहां राष्ट्रवाद, जनतंत्रवाद जैसी नई शक्तियों को पनपने का मौका दिया, तो दूसरी तरफ आधुनिक तानाशाही और सैनिकवाद की नींव भी डाली। फ्रांसीसी क्रांति के प्रभावों को निम्नलिखित बिन्दुओं के अन्तर्गत समझा जा सकता है -

- **स्वतंत्रता, समानता एवं बंधुत्व के नारे का प्रसार**

फ्रांसीसी क्रांति के प्रेरक शब्द थे - स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व। इन तीन शब्दों ने विश्व की राजनीतिक व्यवस्था के स्वरूप में आमूलचूल परिवर्तन का मार्ग प्रशस्त किया। जिस प्रकार धर्म और संस्कृति के क्षेत्र में सत्यम्, शिवम् और सुन्दरम् का महत्व है, उसी प्रकार राजव्यवस्था में स्वतंत्रता, समानता एवं बंधुत्व का।

- **लोकतांत्रिक सिद्धान्त का विकास**

फ्रांसीसी क्रांति का महत्व इस बात मे है कि इसने लोकतांत्रिक मूल्यों को प्रतिष्ठित किया। क्रांति ने राजा के दैवी सिद्धान्तों का अंत कर लोकप्रिय सम्प्रभुता के सिद्धान्त को मान्यता दी। मानवाधिकारों की घोषणा ने व्यक्ति की महत्ता को प्रतिपादित किया और यह सिद्ध किया कि सार्वभौम सत्ता जनता में निहित है।

- **सामंतवाद की समाप्ति**

फ्रांसीसी क्रांति ने सामंती व्यवस्था पर चोट कर सामंती विशेषाधिकारों का अंत किया और क्रांति की ये उपलब्धि यूरोप के अन्य देशों को भी प्रभावित करती रही।

- **राष्ट्रवाद का प्रसार**

फ्रांसीसी क्रांति ने जन-जन में राष्ट्रवाद की भावना को पैदा किया। फ्रांसीसी क्रांति ने राजभक्ति को देशभक्ति मे परिवर्तित कर दिया। इतना ही नहीं फ्रांस के बाहर भी फ्रांसीसी क्रांति ने राष्ट्रीयता की भावना का प्रसार किया, जिसने आगे चलकर नेपोलियन के साम्राज्यवादी विस्तार को रोका।

- **धर्मनिरपेक्षता की भावना का प्रसार**

फ्रांसीसी क्रांति ने धर्म को राज्य से पृथक कर धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र की नींव डाली। अब धर्म व्यक्तिगत विश्वास की वस्तु बन गई, जिसमें राज्य को किसी तरह हस्तक्षेप नहीं करना था।

- **सैन्यवाद का विकास**

फ्रांसीसी क्रांति ने सैन्यवाद को प्रेरित किया। वस्तुतः नागरिकों के लिए सैनिक सेवा अनिवार्य कर दी गई। कहा गया कि "अब से जब तक गणतंत्र के प्रदेशों से शत्रुओं को निकाल बाहर नहीं कर दिया जाता, तब तक फ्रांसीसी जनता स्थायी रूप से सैनिक सेवा के लिए उपलब्ध रहेगी।" यही सैन्यवाद आगे चलकर नेपोलियन के साम्राज्यवाद और प्रथम विश्वयुद्ध का कारण बना।

- **अधिनायकवाद की शुरुआत**

फ्रांसीसी क्रांति को अधिनायकवाद का उद्गम स्रोत माना जाता है। रॉबस्पियर के अन्तर्गत आतंक के राज्य की स्थापना अधिनायकवाद का प्रमाण था। आगे यही परम्परा फ्रांस में नेपोलियन के अन्तर्गत, इटली व जर्मनी में क्रमशः मुसोलिनी व हिटलर के अन्तर्गत अपने चरमोत्कर्ष पर पहुंची।

- **समाजवाद का मार्ग प्रशस्त**

फ्रांसीसी क्रांति ने समाजवादी आन्दोलन को दिशा दी। एक प्रगतिवादी संस्था 'एनरेजेज' के लोगों ने जनता की ओर से बोलने का दावा करते हुए मांग की कि कीमतों पर सरकारी नियंत्रण हो, गरीबों की सहायता की जाएं और युद्ध खर्च को पूरा करने के लिए धनवानों पर भारी कर लगाए जाएं। (Law of Maximum) के तहत् वस्तुओं का अधिकतम मूल्य सरकार द्वारा निर्धारित कर दिया गया।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

1795 ई. में पैन्थियन सोसायटी का गठन हुआ। इसका उद्देश्य मजदूर वर्ग के आंदोलन को सशक्त करना था। इससे संबंधित एक 'ट्रिब्यून' नामक पत्र निकलता था, जिसका संपादक नोएल बवूफ था। वह फ्रांस में ऐसी राजव्यवस्था स्थापित करना चाहता था, जो पूंजीवादी प्रभाव से मुक्त हो और आर्थिक समानता से परिपूर्ण हो। उसने सर्वहारा वर्ग के माध्यम से क्रांतिकारी कार्यक्रम बनाए। यद्यपि पैन्थियन विद्रोह का दमन कर दिया गया, किन्तु आधुनिक समाजवादी आन्दोलन 'बवूफवाद' से काफी प्रभावित रहा।

❒ फ्रांसीसी क्रांति का स्वरूप/प्रकृति

फ्रांसीसी क्रांति की प्रकृति को क्रांति के आदर्शों, क्रांति के नेतृत्व, क्रांति की प्रगति, क्रांति के दौरान लाए गए परिवर्तनों और विश्व पर पड़े प्रभावों के प्रकाश में समझे जाने की जरूरत है। इस दृष्टि से फ्रांसीसी क्रांति एक ऐसी क्रांति थी, जिसका प्रारंभ तो कुलीन वर्ग ने किया, फिर आगे चलकर इसका नेतृत्व मध्यम वर्ग के हाथों में आया। कुछ समय के लिए यह क्रांतिकारी तत्वों के प्रभाव मे रही और इसका अंत एक सैनिक तानाशाह के साथ हुआ। इस तरह फ्रांसीसी क्रांति उस विशाल नदी की तरह रही, जो उच्च पर्वत शिखर से प्रारंभ होकर मार्ग में अनेक छोटे-मोटे पर्वतों को लांघती हुई कभी तीव्र गति से, कभी मंद गति से प्रवाहमान रही।

• मध्यमवर्गीय स्वरूप

1789 ई. में हुई फ्रांसीसी क्रांति को एक बुर्जुआ क्रांति माना जाता है। क्रांति के प्रथम चरण में नेतृत्व तृतीय स्टेट के बुर्जुआई तत्वों के हाथों में था। मध्यमवर्गीय नेतृत्व ने निजी सम्पत्ति को ध्यान में रखते हुए कुछ सिद्धान्त भी बनाए। वस्तुतः सामंतवाद के अंत की घोषणा तो कर दी गई, किन्तु सामंत अधिकारों को यूं ही नहीं छोड़ दिया गया, बल्कि भूमिपतियों की क्षतिपूर्ति करने के बाद ही किसान किसी उत्तरदायित्व से मुक्त हो सकते थे।

मानवाधिकारों की घोषणा में मध्यमवर्गीय प्रभाव देखा जा सकता है। सम्पत्ति के अधिकार को मनुष्य के नैसर्गिक अधिकारों की श्रेणी में रखा गया, जो बुर्जुआ हितों के संरक्षण से संबंधित है। इसी प्रकार वयस्क मताधिकार की बात तो की गई, किन्तु संविधान में 'नागरिक' शब्द का अत्यन्त संकुचित अर्थों में प्रयोग किया गया। नागरिकों को सक्रिय व निष्क्रिय नागरिकों में विभाजित किया गया। इनमें से केवल सक्रिय नागरिकों को मत देने का अधिकार था। विधायिका सभा का सदस्य होने के लिए भी संपत्ति की योग्यता को आधार बनाया गया। इन सब का मतलब था कि राजनीति में मध्यम वर्ग का प्रभाव बना रहा। इस तरह फ्रांसीसी क्रांति ने जन्म पर आधारित भेदभाव को नष्ट किया, परन्तु उसकी जगह प्राचीन सामंतवाद के बदले धन पर आधारित नए सामंतवाद का प्रभुत्व हुआ।

क्राति के दौरान क्रांतिकारियों ने निरंकुश सरकार द्वारा लिए गए ऋणों की बात तो की, किन्तु उन ऋणों को माफ करने की बात किसी ने नहीं की। इसका कारण था यह ऋण सरकार को बुर्जुआ वर्ग ने दिया था। इसी प्रकार सरकार ने चर्च की संपत्ति को तो जब्त किया, परन्तु उसे भूमिहीनों को नहीं बांटा गया। जमीनों को सर्वाधिक ऊँची कीमतों पर बेचा गया और इस जमीन को खरीदने की क्षमता केवल मध्यम वर्ग के पास थी।

फ्रांसीसी क्रांति ने मजदूरों के हितों को नजरअंदाज किया और श्रमिक आंदोलन को हतोत्साहित किया। क्रांति के दौरान श्रमिक वर्ग ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी, किन्तु नेशनल एसेम्बली ने निरंकुश राजतंत्र में निर्मित कानूनों को पुनः लागू कर दिया, जिसके तहत् सभी श्रमिक संघ संबंधी कार्यों पर प्रतिबंध लगा दिया गया और गिल्डों को गैर-कानूनी घोषित कर दिया गया।

नेशनल एसेम्बली में बुर्जुआओं की प्रधानता थी और उसमें जिरोंदिस्त व जैकोबियन भी बुर्जुआ वर्ग से संबंधित थे। यद्यपि जैकोबियन सर्वहार वर्ग के हित की बात करते थे, परन्तु आतंक के राज्य की स्थापना में बुर्जुआ हितों को ही ऊपर रखा गया और श्रमिकों की प्रतिक्रियाओं को दबाने हेतु सेना की सहायता ली गई।

डायरेक्टरी के शासन में भी मध्यमवर्गीय हितों को प्रमुखता दी गई। डायरेक्टरी ने जिस द्विसदनीय विधायिका का निर्माण किया था, उसके सभी सदस्य मध्यमवर्गीय बुद्धिजीवी थे। नेपोलियन के सुधारों पर भी बुर्जुआई प्रभाव देखा जा सकता है। उसने बुर्जुआ हितों को संरक्षित रखते हुए विधि संहिता में सम्पत्ति के अधिकार को सुरक्षित रखा, कुलीनों को अपेक्षाकृत व्यापक अधिकार दिए तथा उसके व्यापारिक और वाणिज्यिक सुधारों का फायदा मध्यम वर्ग को ही मिला।

इस प्रकार क्रांति के स्वरूप में मध्यमर्गीय तत्व दिखाई देते हैं। किन्तु पूरी क्रांति और उसके प्रभाव के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि क्रांति में मध्यवर्गीय तत्वों के साथ कृषक, मजदूर, महिलाओं की सहभागिता थी। इस तरीके से यह मात्र मध्यवर्गीय क्रांति नहीं थी, अपितु इसे एक लोकप्रिय क्रांति के रूप में इसे देखा जाना चाहिए।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

- **विश्वव्यापी स्वरूप**

फ्रांसीसी क्रांति एक विश्वव्यापी स्वरूप लिए हुए थी। क्रांतिकारियों ने 1789 ई. में मानवाधिकारों की घोषणा की, जिसके तहत् कहा गया कि जन्म से समान पैदा होने के कारण सभी मनुष्यों को समान अधिकार मिलना चाहिए और यह सभी देशों के लिए, सभी मनुष्यों के लिए, सभी समय के लिए और सारी दुनिया के लिए है।

नेशनल एसेम्बली द्वारा 1792 ई. में कॉमपेने नामक अंग्रेज नायक को फ्रांसीसी नागरिक की उपाधि दी गई और उसे नेशनल कन्वेंशन का प्रतिनिधि भी चुना गया। इसी प्रकार क्रांति के दौरान यह विचार आया कि क्रांति को स्थायी और सुदृढ़ रखने के लिए इसे यूरोप के अन्य देशों में भी विस्तारित किया जाए। इसमें एक ऐसे युद्ध की कल्पना की गई, जिसमें फ्रांसीसी सेनाएं पड़ोसी देशों में प्रवेश कर वहां के स्थानीय क्रांतिकारियों से मिलकर राजतंत्र को अपदस्थ कर गणतंत्रों की स्थापना करतीं।

फ्रांस की क्रांति मात्र एक राष्ट्रीय घटना नहीं थी, अपितु इसके सिद्धान्तों – स्वतंत्रता, समानता एवं बंधुत्व के नारों से संपूर्ण यूरोप गूंज उठा। क्रांति के प्रभाव इतने दूरगामी रहे कि समस्त यूरोप इससे आच्छादित हुआ। इसी संदर्भ कहा गया 'यदि फ्रांस को जुकाम होता है, तो समस्त यूरोप छींकता है।'

- **क्रांति सुनियोजित नहीं**

फ्रांस की क्रांति रूसी क्रांति के समान सुनियोजित नहीं थी। वस्तुत: रूसी क्रांति बोल्शेविकों द्वारा सुनियोजित थी और उसका उद्देश्य सत्ता हासिल कर सर्वहारा का शासन स्थापित करना था, लेकिन फ्रांसीसी क्रांति शुरू से अंत तक घटनाओं और परिस्थितियों का शिकार रही। क्रांति के दौरान घटनाएं इस तरह से नहीं घटी जिस तरह से क्रांतिकारियों ने चाहा, बल्कि घटनाओं ने क्रांतिकारियों को अपना रास्ता बदलने के लिए मजबूर किया। स्टेट्स जनरल की बैठक में यदि तृतीय स्टेट की बात अन्य स्टेट्स ने मान ली होती तो क्रांति का रुख दूसरा होता। इसी प्रकार आतंक का राज्य और डायरेक्टरी के शासन भी सुनियोजित ढंग से नहीं चले। इस दृष्टि से यह क्रांति न तो स्वत: स्फूर्त थी और न ही नियोजित।

- **सामाजिक क्रांति के रूप में**

फ्रांसीसी क्रांति के मूल में तत्कालीन फ्रांसीसी समाज की दुरावस्था भी एक महत्वपूर्ण कारक थी। पूरा समाज विशेषाधिकार प्राप्त और अधिकारविहीन वर्गों में विभक्त था। कृषकों की स्थिति करों के बोझ से खराब थी, तो दूसरी तरफ उन्हें सामंतों के अत्याचार तथा चर्च के शोषण का भी शिकार होना पड़ता था। ऐसी स्थिति में क्रांतिकारियों ने इस असमानता के विरुद्ध आवाज बुलंद की और स्वतंत्रता, समानता तथा बंधुत्व का नारा दिया। क्रांति के दौरान ही सामंतवाद व विशेषाधिकारों को समाप्त किया गया।

- **क्रांति का अधिनायकवादी स्वरूप**

फ्रांसीसी क्रांति में सर्वसाधारण की भागीदारी रही थी, किन्तु उनके हितों को नजरंदाज करके क्रांति ने अधिनायकवाद का रूप धारण कर लिया, जिसमें किसी एक व्यक्ति के सिद्धान्तों और इच्छाओं की प्रधानता थी। वस्तुत: क्रांति के दौरान रॉबस्पियर के नेतृत्व में एक तानाशाही सरकार या अधिनायकतंत्र की स्थापना हुई थी और आगे चलकर नेपोलियन ने भी अधिनायकतंत्र की स्थापना की।

- **प्रगतिशील क्रांति के रूप में**

फ्रांसीसी की क्रांति पुरातन व्यवस्था में व्याप्त विसंगतियों एवं बनियादी दोषों के विरुद्ध एक सशक्त प्रतिक्रिया थी। क्रांति ने निरंकुश राजतंत्र, सामाजिक विषमता, चर्च की प्रधानता तथा आर्थिक दिवालियेपन के संकट से जूझ रहे कुशासन का अंत कर फ्रांस में प्रजातांत्रिक शासन प्रणाली का मार्ग प्रशस्त किया। इस दृष्टि से इसे प्रगतिशील क्रांति के रूप में देखा जा सकता है।

इतना ही नहीं मानवाधिकारों की घोषणा स्वतंत्रता, समानता व बन्धुत्व के नारे तथा राष्ट्रीयता की विचारधारा से समस्त विश्व को अवगत कराया गया। परिणामस्वरूप विश्व के कई देशों में राजनीतिक अधिकारों की मांग को लेकर जन आंदोलन होने लगे। इटली एवं जर्मनी के एकीकरण को प्रोत्साहन मिला। धर्म और राजनीति के पृथक्करण का मुद्दा भी पहली बार इसी क्रांति के दौरान उठा। राज्य और राजनीति धर्म से अलग किए गए।

इस प्रकार हम देखते हैं कि फ्रांसीसी क्रांति एक समग्र स्वरूप लिए हुए थी। बदलते चरण व नेतृत्व के साथ-साथ क्रांति का उद्देश्य व स्वरूप भी बदलता रहा। यद्यपि यह क्रांति तत्कालिक रूप से अपने उद्देश्यों में असफल रही, लेकिन इसने सम्पूर्ण विश्व को प्रभावित कर भविष्य में होने वाली क्रांतियों का स्वरूप भी निश्चित कर दिया।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

नेपोलियन बोनापार्ट

नेपोलियन का जन्म 15 अगस्त, 1769 ई. को एक मध्यम वर्गीय इतालवी परिवार मे कोर्सिको द्वीप के आयाचियों नगर मे हुआ था। जन्म के समय जिनोवा ने इस द्वीप को फ्रांस को बेच दिया था। फलत: फ्रांस के विरुद्ध वहां असतोष व्याप्त था। नेपोलियन की आरंभिक शिक्षा पेरिस की सैन्य अकादमी में सम्पन्न हुई। 15 वर्ष की आयु में ही तोपखाने के सहायक लेफ्टिनेंट के पद पर नियुक्त हुआ। लेकिन उसे फ्रांस से घृणा थी और वह प्राय: कोर्सिको को मुक्त करने का स्वप्न देखा करता था। क्रांति के आरंभ होते समय वह 20 वर्ष की उम्र का था और क्रांति के पक्ष में उसने निबंध लिखा। जैकोबियन को समर्थन दिया और नौकरी छोड़ कोर्सिको द्वीप चला गया।

1793 ई. में अग्रेजों ने जब इस द्वीप पर कब्जा कर लिया, तो वह तुलो चला गया। कुछ समय पश्चात् अंग्रेजों ने तुलो पर भी अधिकार कर लिया। फ्रांस ने तुला को मुक्त कराने के लिए जो सेना भेजी, उसका सेनापति बुरी तरह घायल हो गया। अत: नेपोलियन को फ्रांसीसी सेना का उत्तरदायित्व सौंपा गया।

1795 ई. में थर्मेडिरियन प्रतिक्रिया के वक्त जब पेरिस की भीड़ ने नेशनल कन्वेंशन का घेराव किया, तब नेपोलियन ने कन्वेंशन की रक्षा कर अपनी प्रतिभा का पूरा परिचय दिया। फलत: उसे मेजर जनरल बना दिया गया और उसे इटली पर आक्रमण करने वाली सेना का मुख्य सेनापति बनाया गया। इसी समय नेपोलियन ने सेनापति बोआर्ने की विधवा जोसेफिन बोआर्ने से विवाह किया, जो एक कुलीन महिला थी। इस समय नेपोलियन ने Directory के अध्यक्ष बारो के साथ अपना निकट संबंध बनाया।

अपनी सैनिक और कूटनीतिक क्षमता से नेपोलियन ने Directory को प्रभावित कर दिया। अत: उसे इटली अभियान का नेतृत्व सौंपा गया। 1796 ई. में नेपोलियन ने इटली का अभियान कर नीस और सेवॉय का क्षेत्र प्राप्त कर किया और युद्ध का खर्च उसने विजित प्रदेशों से निकालना शुरू किया। इटली अभियान के बाद नेपोलियन ने ऑस्ट्रिया का अभियान किया और उसे पराजित कर 1797 ई. में कैम्पोफोर्मियो की संधि की। संधि से ऑस्ट्रिया ने नीदरलैण्ड, फ्रांस को सौंप दिया और राइन नदी के बाएं किनारों का समूचा क्षेत्र फ्रांस के अधीन स्वीकार किया। अपने विजय अभियानों द्वारा बनाए गए राज्यों तथा ऑस्ट्रिया के साथ की गई संधि में नेपोलियन क्रांति के सिद्धान्तों का पालन नहीं कर रहा है। नए राज्यों और उसकी शासन पद्धति में जनता की कोई भूमिका नहीं हैं। इस अभियान के द्वारा नेपोलियन राष्ट्रीय नायक बन गया था। इस बात को और अपने महत्व को समझते हुए उसने कहा भी कि फ्रांस के निदेशकों में एक भी नहीं है, जो धन पाकर उसके जूते चूमने को तैयार न हो जाए। वह चाहता तो सत्ता पर कब्जा कर लेता पर अभी वह और इंतजार करना चाहता था, क्योंकि 'नाशपाती अभी पकी नहीं थी।'

दिसम्बर, 1797 ई. में नेपोलियन जब फ्रांस वापस आया, तो उससे डायरेक्टरों का भय हुआ। उन्होंने नेपोलियन से इंग्लैण्ड जीतने को कहा, ताकि वह फ्रांस से बाहर रहे। नेपोलियन स्वयं भी ऐसा चाहता था, क्योंकि उसका मानना था कि फ्रांसीसी उसे तभी तक याद रखेंगे, जब तक उन्हें विजय दिलाता रहेगा। नेपोलियन जानता था कि इंग्लैण्ड की समृद्धि उसके पूर्वी उपनिवेशों विशेषकर भारत से व्यापार के कारण थी। ऐसे मे मिस्र में फ्रांसीसी सत्ता कायम हो जाए, तो भू-मध्यसागर फ्रांसीसी झील बन जाएगा। तब इंग्लैण्ड के व्यापार को क्षति पहुंचाकर वह इंग्लैण्ड को पराजित कर सकेगा। इस उद्देश्य से उसने मिस्र का अभियान मई, 1798 ई. में कर काहिरा को जीता।

किन्तु इसी बीच इंग्लैण्ड के प्रसिद्ध सेनापति नेल्सन ने फ्रांसीसी बेड़े को परास्त कर दिया। फ्रांस की इस पराजय का समाचार सुनकर टर्की ने फ्रांस के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। अत: जनवरी, 1799 ई. में नेपोलियन ने तुर्की के प्रदेश सीरिया पर आक्रमण किया, किन्तु उस पर बिना अधिकार किए ही वह मिस्र लौट आया, क्योंकि यूरोप के राष्ट्रों ने फ्रांस के विरुद्ध द्वितीय गुट का गठन कर लिया था। उधर ऑस्ट्रिया की सेनाओं ने फिर से इटली विजित कर राजतंत्र की स्थापना कर ली थी। ऑस्ट्रिया की इस विजय से डायरेक्टरी के शासन की दुर्बलता प्रमाणित हो गई। उधर फ्रांस के अंदरूनी हालात तेजी से बदल रहे थे। उग्रवादी नेता बावफू ने डायरेक्टरी के विरुद्ध विद्रोह कर दिया था। फ्रांस की जनता डायरेक्टरी के शासन से निराश हो चुकी थी। इस समय नेपोलियन को अपनी महत्वकांक्षा पूरी करने का स्वर्णिम अवसर दिखाई पड़ा, बल्कि यू कहें कि नेपोलियन को फ्रांस की हालात पर अपना सुखद भविष्य नजर आ रहा था। अत: वह अपनी सेना वहीं छोड़कर विश्वस्त साथियों के साथ फ्रांस लौटा। अपनी ही परेशानियों में डूबी फ्रांसीसी जनता नेपोलियन

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

के मिस्र अभियान के बारे में कुछ भी जानने को उत्सुक नहीं थी, बल्कि फ्रांस पहुंचने पर जनता ने उसका उल्लासपूर्वक स्वागत किया। लोग फ्रांस को निराशाजनक स्थिति से उबारने की आशा नेपोलियन से कर रहे थे। ऐसे में नेपोलियन ने कहा कि "ऐसा मालूम पड़ता है कि हर कोई मेरी प्रतीक्षा कर रहा था। यदि मैं कुछ समय पूर्व आता तो बहुत शीघ्रता होती, कुछ समय बाद आता तो बहुत देर हो जाती। मैं ठीक समय पर आया हूं अब नाशपाती पक चुकी है।"

9 नवम्बर, 1799 को नेपोलियन ने कुछ डायरेक्टर्स के साथ षड्यंत्र कर 500 की परिषद और महल को घेर लिया और अपने सिपाहियों की मदद से सभा से अपने सारे विरोधियों को बाहर निकाल दिया तथा निदेशकों से जबरदस्ती इस्तीफा ले लिया। इसी के साथ डायरेक्टरी के शासन का अंत कर दिया और नए संविधान के तहत तीन काउंसलों की नियुक्ति की गई, जिसमें नेपोलियन ने प्रधान काउंसल बनकर फ्रांस की सत्ता पर अपना अधिकार किया। इस प्रकार राज्य विप्लव द्वारा क्रांतिपुत्र नेपोलियन ने क्रांति का अंत कर दिया।

- **नेपोलियन के उदय में सहायक परिस्थितियां**

फ्रांस में नेपोलियन की तानाशाही की स्थापना से यह प्रश्न उठ खड़ा होता है कि जिन फ्रांसीसी नागरिकों ने क्रांति के लिए संघर्ष कर पुरातन व्यवस्था का अंत कर नवीन संविधान बनाकर नागरिक स्वतंत्रता प्राप्त की थी, उन्हीं नागरिकों ने 5 वर्ष में क्रांति को विस्तृत कर एक अधिनायक नेपोलियन को अपना शासक क्यों स्वीकार कर लिया?

1789 ई. में फ्रांस में जो क्रांति हुई थी, उसने पुरातन व्यवस्था का तो अंत कर दिया था, किन्तु इसके पश्चात् 1798 ई. तक सुव्यवस्थित शासन प्रणाली कायम नहीं की जा सकी थी। सभी क्षेत्रों में नए-नए प्रयोग हो रहे थे, परन्तु स्थायित्व कहीं नहीं था। वस्तुतः क्रांति की राजनीतिक उथल-पुथल से फ्रांसीसी उब चुके थे और अब वे एक स्थायी सरकार चाहते थे। सिर्फ नेपोलियन ही ऐसी सरकार दे पाने में उन्हें समर्थ दिखा।

कानून की एकरूपता और सुव्यवस्थित शासन के लिए लोगों ने क्रांति की थी, लेकिन क्रांति के बाद फ्रांस में आतंक, अराजकता, अव्यवस्था ही व्याप्त रही। डायरेक्टरी का शासनकाल तो भ्रष्टाचार तथा परस्पर संघर्ष का काल था। परिणामस्वरूप शासन निष्क्रिय हो गया। ऐसे में क्रांति के उद्देश्य असफल हो रहे थे। ऐसे में फ्रांस की जनता किसी भी ऐसे व्यक्ति का स्वागत करने को तैयार थी, जो फ्रांस में कानून-व्यवस्था कायम कर सके, भ्रष्टाचार को समाप्त कर सके और अनुशासन को स्थापित कर सके। इस दुर्व्यवस्था के काल में नेपोलियन के रूप में उन्हें विकल्प नजर आया, क्योंकि नेपोलियन ने विभिन्न इटालियन प्रदेशों में एक सुनियोजित प्रशासन स्थापित किया था।

डायरेक्टरों के शासनकाल में उसकी विदेश नीति तथा युद्धों में फ्रांस की कमजोर स्थिति से जनता असंतुष्ट थी और नेपोलियन ने युद्धों अर्जित कर अपने को अजेय सिद्ध किया और आगे जब फ्रांस के विरुद्ध यूरोपीय राष्ट्रों का द्वितीय गुट तैयार हुआ और चारों ओर से फ्रांस पर हमला करने की कार्यवाही आरंभ हुई, तब फ्रांस की जनता ने ऐसे नाजुक क्षणों में नेपोलियन एक मुक्तिदाता के रूप में दिखाई पड़ा, क्योंकि वही फ्रांसीसी राष्ट्र को संभावित खतरे से बचा सकता था।

फ्रांस का मध्यम वर्ग स्थिरता और स्थायित्व चाहता था और नेपोलियन के रूप में उन्हें यह आशा दिखाई वर्ग स्थिरता चाहता था और नेपोलियन के रूप मे उन्हें यह आशा दिखाई पड़ी। वस्तुतः सभी वर्ग ने नेपोलियन से आशान्वित थे। धनिक वर्ग अपनी सुरक्षा की आशा में, तो गरीब वर्ग सहायता की लालसा में उसके साथ हो गए। भगौड़े फ्रांस लौटने की चाहत में थे, तो साहसी विजय की आशा में थे। राजतंत्रवादी एक निरंकुश व्यवस्था के लौटने की आशा कर रहे थे और प्रबुद्ध गणतंत्रवादी डायरेक्टरी के शासन की अपेक्षा एक योग्य व्यक्ति की सत्ता को बेहतर समझते थे।

फ्रांसीसी क्रांति ने योग्यता के आधार पर पद मिलने की व्यवस्था की और नेपोलियन ने इस व्यवस्था का लाभ उठाया, उच्च सैनिक पद प्राप्त किया और अपनी प्रतिभा दिखाई।

इस प्रकार विभिन्न कारकों ने सत्ता में आने का मार्ग प्रशस्त किया। इस तरह उसकी योग्यता एवं तत्कालीन परिस्थितियों ने उसे सत्ता तक पहुंचाया और फ्रांसीसी जनता से स्वीकृति दिलवाई।

❐ नेपोलियन के सुधार

1799 ई. में नेपोलियन बोनापार्ट में सत्ता को हाथों में लेकर अपनी स्थिति सुदृढ़ करने तथा फ्रांस को प्रशासनिक स्थायित्व प्रदान करने के लिए विभिन्न क्षेत्रों में सुधार किए। वस्तुतः डायरेक्टरी के शासन को समाप्त कर नेपोलियन ने सत्ता प्राप्त की थी और फ्रांस की

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

जनता ने उस परिवर्तन को स्वीकार किया था तो इसका कारण यह था कि वह अराजकता और अव्यवस्था से उब चुकी थी। अत: नेपोलिन के लिए यह जरूरी था कि वह आंतरिक क्षेत्र में एक सुव्यवस्थित शासन और कानून व्यवस्था की स्थापना की।

- **संविधान निर्माण**

प्रथम काउंसल बनने के बाद नेपोलियन ने फ्रांस के लिए एक नवीन संविधान का निर्माण किया, जो क्रांति युग का चौथा संविधान था। इसके द्वारा कार्यपालिका शक्ति तीन काउंसलरों में निहित कर दी गई। प्रधान काउंसल को अन्य काउंसलरों से अधिक शक्ति प्राप्त थी। वास्तव में संविधान में गणतंत्र का दिखावा तो जरूर था, लेकिन राज्य की सम्पूर्ण सत्ता नेपोलियन के हाथों में केन्द्रीत थी।

- **प्रशासनिक सुधार**

नेपोलियन ने शासन व्यवस्था का केन्द्रीकरण किया और Departments तथा District की स्थानीय सरकारों को समाप्त कर Prefects एवं Sub-prefects की नियुक्ति की। इनकी नियुक्ति तथा गांव और शहरों के सभी मेयरों की नियुक्ति सीधे केन्द्रीय सरकार द्वारा की जाने लगी। इस प्रकार प्रशासन के क्षेत्र में नेपोलियन ने इन अधिकारियों पर पर्याप्त नियंत्रण रख प्रशासन को चुस्त-दुरुस्त बनाए रखा साथ ही योग्यता के आधार पर इनकी नियुक्ति की।

प्रशासनिक क्षेत्रों में नेपोलियन के सुधार एक प्रकार से क्रांति के विरोधी के रूप में थे, क्योंकि नेशलन एसेम्बली ने क्रांति के दौरान प्रशासनिक ढांचे का पूर्ण विकेन्द्रीकरण कर दिया था तथा देश का शासन चलाने का दायित्व निर्वाचित प्रतिनिधियों को दिया गया था, लेकिन नेपोलियन ने इस व्यवस्था को उलट दिया तथा क्रांतिपूर्व व्यवस्था को फिर से स्थापित किया। उस दृष्टि से वह क्रांति का हंता था।

- **आर्थिक सुधार**

नेपोलियन ने फ्रांस की जर्जर आर्थिक स्थिति से उसे उबारने का प्रयत्न किया। इस क्रम में उसने सर्वप्रथम कर प्रणाली को सुचारू बनाया। कर वसूलने का कार्य केन्द्रीय कर्मचारियों के जिम्मे किया तथा उसकी वसूली सख्ती से की जाने लगी। उसने घूसखोरी, सट्टेबाजी, ठेकेदारी में अनुचित मुनाफे पर रोक लगा दी। उसने मितव्ययिता पर बल दिया और फ्रांस की जनता पर अनेक अप्रत्यक्ष कर लगाए। नेपोलियन ने फ्रांस में वित्तीय गतिविधियों को सुचारू रूप से चलाने के लिए Bank of France की स्थापना की, जो आज भी कायम है। राष्ट्रीय ऋण को चुकाने के लिए उसने एक पृथक कोष की भी स्थापना की। नेपोलियन ने जहां तक संभव हुआ सेना के खर्च का बोझ विजित प्रदेशों पर डाला और फ्रांस की जनता को इस बोझ से मुक्त रखने की कोशिश की। नेपोलियन ने कृषि के सुधार पर भी बल दिया और बंजर रेतीले इलाके को उपजाऊ बनाने की योजना बनाई।

व्यापार के विकास के लिए नेपोलियन ने आवागमन के साधनों की तरफ पर्याप्त ध्यान दिया। सड़कें, नहरे बनवाई गईं विभिन्न प्रकार के व्यवसायों की प्रगति के लिए यांत्रिक शिक्षा की व्यवस्था की। फ्रांसीस औद्योगिक वस्तुओं को लोकप्रिय बनाने के लिए प्रदर्शनी के आयोजन को बढ़ावा दिया और स्वदेशी वस्तुओं एवं उद्योगों को प्रोत्साहन दिया। बेरोजगारी की समस्या को दूर करने के लिए निर्माण कार्य को प्रोत्साहन दिया। इस तरह नेपोलियन ने फ्रांस को जर्जर और दिवालियेपन की स्थिति से उबारा।

किन्तु आर्थिक सुधारों की दृष्टि से भी नेपोलियन के कार्य क्रांति विरोधी दिखाई देते हैं। क्रांतिकाल में प्रत्यक्ष करों पर बल दिया गया था, जबकि नेपोलियन ने अप्रत्यक्ष करों पर बल देकर पुरातन व्यवस्था को स्थापित करने की कोशिश की। इसी प्रकार नेपोलियन ने वाणिज्यवादी दर्शन को प्राथमिकता देकर क्रांतिविरोधी मानसिकता का प्रदर्शन किया। उसका मानना था कि राज्य को कोष की सुरक्षा एवं व्यापार में संतुलन लाने के लिए सक्रिय हस्तक्षेप करना होगा, जबकि क्रांति का बल तो मुक्त व्यापार पर था।

- **शिक्षा संबंधी सुधार**

नेपोलियन ऐसे नागरिकों को चाहता था, जो उसके एवं उसके तंत्र के प्रति विश्वास रखें। इसके लिए उसने शिक्षा के राष्ट्रीय एवं धर्मनिरपेक्ष स्वरूप अपनाते हुए सुधार किए। शिक्षा को प्राथमिक, माध्यमिक और उच्च स्तरों में संगठित किया। सरकार के द्वारा नियुक्त शिक्षकों की सहायता से चलने वाले इन स्कूलों में एक ही पाठ्यक्रम, एक ही पाठ्यपुस्तकें, एक ही वर्दी रखी जाती थी। नेपोलियन ने पेरिस में एक विश्वविद्यालय की स्थापना की और उसमे लैटिन, फ्रेंच, विज्ञान, गणित इत्यादि विषयों की शिक्षा दी जाती थी। यह यूनिवर्सिटी विश्वविद्यालय के सामान्य अर्थ में कोई यूनिवर्सिटी नहीं थी, वरन् प्राथमिक से उच्चतर शिक्षा तक की सभी संस्थाओं को एकसूत्र में बांधने वाली एक व्यवस्था थी। शिक्षा पर अधिकाधिक सरकार नियंत्रण रखना तथा विद्यार्थियों को शासन के प्रति निष्ठावान

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

बनाना इसका उद्देश्य था। नेपोलियन ने शोध कार्यों के लिए इंस्टीचर ऑफ फ्रांस की स्थापना की।

नेपोलिन ने नारी शिक्षा में कोई रुचि नहीं दिखाई। उनकी शिक्षा का भार धार्मिक संस्थाओं पर छोड़ दिया गया।

- **धार्मिक सुधार**

फ्रांस की बहुसंख्यक जनता कैथोलिक चर्च के प्रभाव में थी। क्रांति के दौरान चर्च की शक्ति को कमजोर कर उसे राज्य के अधीन ले लाया गया। चर्च की सम्पत्ति का राष्ट्रीकरण कर दिया गया और पदारियों को राज्य की वफादारी की शपथ लेने को कहा गया। इससे पोप नाराज हुआ और उसने आम जनता को विरोध करने के लिए उकसाया। फलत: सरकार और आम जनता के बीच तनाव पैदा हो गया। नेपोलियन ने इसे दूर करने के लिए 1801 में पोप के साथ समझौता किया, जिसे कॉनकारेडट (Concordate) कहा जाता है। उसने निम्नलिखित प्रावधान थे –

- कैथोलिक धर्म को राजकीय धर्म के रूप में स्वीकार किया गया।
- विशपों की नियुक्ति प्रथम काउंसलर के द्वारा होगी, पर वे अपने पद में पोप द्वारा दीक्षित होंगे। शासन की स्वीकृति पर ही छोटे पादरियों की नियुक्ति विशप करेगा। सभी चर्च के अधिकारियों को राज्य के प्रति भक्ति लेना आवश्यक था। इस तरह चर्च राज्य का अंग बन गया और उसके अधिकारी राज्य से वेतन पाने लगे।
- गिरफ्तार पादरी छोड़ दिए गए और देश से भागे पादरियों को वापस आने की इजाजत दे दी गई।
- चर्च की जब्त संपत्ति एवं भूमि से पोप ने अपना अधिकार त्याग दिया।
- क्रांति काल के कैलेण्डर को स्थगित कर दिया गया तथा प्राचीन कैलेण्डर एवं अवकाश दिवासों को पुन: लागू कर दिया गया।
- इस प्रकार नेपोलियन ने राजनीतिक उद्देश्यों से परिचालित होकर पोप से संधि की और क्रांतिकालीन अव्यवस्था को समाप्त कर चर्च को राज्य का सहभागी बनाया। प्रकारांतर से नेपोलियन ने चर्च के क्रांतिकालीन घावों पर मरहम लगाने की कोशिश की।
- किन्तु इस समझौते के द्वारा नेपोलियन ने कैथोलिक धर्म को राज्य धर्म बनाकर राज्य के धर्मनिरपेक्ष्य भावना को ठेस पहुंचाई। धर्म को राज्य का अंग मानने वाले नेपोलियन का पोप के साथ यह समझौता अस्थायी रहा, क्योंकि 1807 ई. में पोप के साथ उसे संघर्ष करना पड़ा तथा पोप के राज्य पर नियंत्रण स्थापित किया।

- **कानून संहिता (नेपोलियन कोड) का निर्माण**

नेपोलियन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण और स्थायी कार्य था – विधि संहिता का निर्माण। वस्तुत: क्रांति के पहले फ्रांस की कानून व्यवस्था छिन्न-भिन्न थी और इतने प्रकार के कानून थे कि कानून का पालन कराने वालों को भी उनका ज्ञान नहीं था और क्रांति के दौरान भी अराजकता बढ़ गई थी। नेपोलियन ने इस अव्यवस्था को दूर किया। स्वयं नेपोलियन अपनी विधि संहिता को अपने 40 युद्धों से अधिक शक्तिशाली मानता था। इस कोड के द्वारा नेपोलियन ने फ्रांस में सार्वलौकिक कानून पद्धति की स्थापना की।

नागरिक संहिता के तहत उसने परिवार के मुखिया का अधिकार सुदृढ़ किया। स्त्रियां पुरुषों के अधीन रखी गई और पति का कार्य पत्नी की रक्षा करना था। तलाक की पद्धति को कठिन बनाया गया। सिविल विवाह की व्यवस्था भी इस संहिता में की गई। इस प्रकार सिविल विवाह और तलाक की प्रथा को मान्यता देकर नेपोलियन ने यूरोप में इस बात का प्रचलन किया कि बिना पादरियों के सहयोग के भी समाज का काम चल सकता है।

इसी प्रकार अन्य संहिताएं जैसे व्यापार संबंधी कानून संहिता, Code of Criminal Proc. आदि बनाए गए। उसके व्यापारिक कोड में श्रमजीवियों के हितों की उपेक्षा की गई थी और उनके संघों प्रतिबन्ध को जारी रखा गया था। इस दृष्टि से नेपोलियन ने क्रांति के आदर्शों के विरुद्ध कार्य किया।

इसके बावजूद इस विधि संहिता की महत्ता समूचे देश में कानून की एकरूपता प्रदान करने तथा व्यावहारिक रूप से न्याय व्यवस्था को आसान बनाने में थी। जहां-जहां नेपोलियन की सेनाएं गईं यह संहिता लागू की गई और नेपोलियन की पराजय के बाद भी बरकरार रही। यह नेपोलियन की एक स्थायी कीर्ति है।

नेपोलियन की विधि संहिता में बुजुआ वर्ग के हितों पर ज्यादा जोर दिया गया है। भूमि संबंधी अधिकारों को और मजबूत बनाया गया और व्यक्तिगत संपत्ति की रक्षा केलिए कई कानून बनाए गए। ट्रेड यूनियन बनाया अपराध घोषित किया गया। मुकदमें की स्थिति

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

में मजदूरों की दलीलों के बदले मालिकों की बातों को न्यायालयों को मानने को कहा गया।

- **सामाजिक क्षेत्र में सुधार**

नागरिक संहिता का आधार सामाजिक समता भी है। विशेषाधिकार और सामंती नियम का संहिता में कोई स्थान नहीं था। बड़े पुत्र को संपत्ति का उत्तराधिकारी मानने का कानून भी नहीं था। संपत्ति पर सभी पुत्रों को बराबरी का अधिकार दिया गया। नेपोलियन ने समाज में एक नवीन कुलीन वर्ग की स्थापना की। उसने आय के हिसाब से उपाधियों का क्रम निर्धारित किया। नेपोलियन का यह कार्य क्रांति के आदर्शों के विपरीत था।

❐ नेपोलियन सम्राट के रूप में (1804 ई. - 1814 ई.)

प्रथम काउंसलर के रूप में नेपोलियन की नियुक्ति उसके सम्राट बनने के पूर्व की प्रक्रिया थी। 1802 ई. में सीनेट ने उसे जीवनपर्यंत काउंसलर बनाय। 1804 ई. में नेपोलियन ने गणतंत्र का लबादा उतार फेंका और तथाकथित जनमत संग्रह द्वारा वह फ्रांस का सम्राट बन गया और एक बार फिर फ्रांस में वशानुगत राजतंत्र की स्थापना हुई। राज्यभिषेख 1804 ई. में पेरिस के चर्च मे हुआ और एक भव्य समारोह में पोप के हाथों में मुकुट लेते हुए उसने स्वयं धारण किया। इस तरह ताज धारण करने में पोप की भूमिका को खारिज किया और शक्ति की महत्ता स्थापित की। वस्तुत: उस इस समय नेपोलियन ने कहा था "मैंने फ्रांस के राजमुकुट को धूल पड़े हुए पाया, अपनी तलवार की ताकत में मैंने मुकुट उठाय है, तो इसे पहनाने का श्रेय दूसरे को क्यों दूं।" शासक बनने के पश्चात् नेपोलियन ने लुई 14वें के मॉडल पर दैवीय राजत्व के सिद्धान्त को पुनर्जीवित करने का प्रयास किया और इतना ही नहीं उसने अपना संबंध फ्रांस के बूर्बो वंश से जोड़ना चाहा। इस तरीके से नेपोलियन ने क्रांति के आदर्शों को उलट दिया और क्रांति का गला घोंटकर पुरातन व्यवस्था स्थापित करने की कोशिश की।

इंग्लैण्ड के विरुद्ध अभियान - 1803 ई.

नेपोलियन ने इंग्लैण्ड के साथ 1802 में आमिया की संधि की थी। महत्वकांक्षाओं के चलते यह संधि ज्यादा समय तक नहीं चली। फलस्वरूप 1803 ई. में इंग्लैण्ड और फ्रांस के बीच युद्ध छिड़ गया। वस्तुत: इंग्लैण्ड पर आक्रमण के लिए जरूरी था कि नेपोलियन एक श्रेष्ठ नौसेना तैयार करता, किन्तु वह ऐसा नहीं कर सका। अत: 1805 ई. में ट्रैफलगर के युद्ध में इंग्लैण्ड विजयी हुआ, क्योंकि उसकी नौसेना श्रेष्ठ थी। ट्रैफलगर की पराजय ने समुद्र में इंग्लैण्ड की प्रभुता को स्थापित तो किया ही और साथ ही नेपोलियन को इंग्लैण्ड से दूसरे तरीके से निपटने को बाध्य किया। इसी क्रम में नेपोलियन ने आगे महाद्वीपीय व्यवस्था लागू की।

ऑस्ट्रिया से युद्ध - 1805 ई.

1805 ई. तक नेपोलियन के विरुद्ध रूस, ऑस्ट्रिया, प्रशा और इंग्लैण्ड का गुट बन चुका था। इस युद्ध में नेपोलियन ने ऑस्ट्रिया को पराजित कर गुट को छिन्न-भिन्न कर दिया और ऑस्ट्रिया के साथ प्रेसबर्ग की संधि की, जिसके तहत् नेपोलियन को ऑस्ट्रिया से वेनेशिया, इरिट्रिया तथा अन्य कई क्षेत्र प्राप्त हुए। इस संधि का एक महत्वपूर्ण परिणाम यह निकला कि राइन परिसंघ अस्तित्व में आया, जिसमें बावेरिया सहित जर्मनी के 14 राज्य सम्मिलित थे। नए जर्मन संघ ने जर्मन राष्ट्र के प्रति अपनी भक्ति को त्यागकर नेपोलियन को अपना संरक्षक माना। इतना ही नहीं उसने ऑस्ट्रिया के सम्राट फ्रांसिस को पवित्र रोमन साम्राज्य का पद त्यागने को विवश कर दिया। इस तरह 1806 ई. में पवित्र रोमन साम्राज्य का अंत हुआ। नेपोलियन यूरोप में अब अपने समर्थक और पारिवारिक लोगों को राजा नियुक्त किया गया। नेपल्स में जोजेफ बोनापार्ट को राजा बनाया गया, तो हॉलैण्ड में अपने दूसरे भाई लुई बोनापार्ट की गद्दी सौंपी। इस प्रकार नेपोलियन ने दूसरे देशों में भी क्रांति की भावना को उलट, गणतंत्र का गला घोंट राजतंत्र को स्थापित किया।

प्रशा से युद्ध (1806 ई.)

जर्मनी में नेपोलियन के हस्तक्षेप से प्रशा नाराज हो गया, क्योंकि वह जर्मनी का प्रमुख राज्य था। नेपोलियन ने प्रशा को 1806 ई. में जेना की लड़ाई में पराजित किया और बर्लिन में प्रवेश किया। यहीं से उसने महाद्वीपीय व्यवस्था की शुरुआत की।

रूस से युद्ध (1807)

प्रशा को हराने के बाद नेपोलियन ने रूस की तरफ ध्यान दिया, क्योंकि महाद्वीपय व्यवस्था की सफलता के लिए रूस का सहयोग आवश्यक था। इलो के युद्ध में दोनों लड़े फिर फिडलैण्ड के युद्ध में रूसी सेना बुरी तरह पराजित हुई। अत: रूसी जार एलेक्जेंडर प्रथम ने नेपोलियन (फ्रांस) से 1807 ई. में तिलसिट की संधि की। इस संधि के तहत् नेपोलियन ने इंग्लैण्ड के विरुद्ध रूस के सहयोग का

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

वादा प्राप्त किया और कई क्षेत्रों में अपनी प्रभुता स्वीकार करवाई। तिलसित की संधि ने नेपोलियन के उत्कर्ष को उच्चतम अवस्था तक पहुंचा दिया। इस संधि से यूरोप का सबसे बड़ा देश नेपोलियन के उत्कर्ष को उच्चतम अवस्था तक पहुंचा दिया। इस संधि से यूरोप का सबसे बड़ा देश नेपोलियन की शरण में आ गया। उस समय नेपोलियन अपनी शक्ति की पराकाष्ठा पर था और उसका साम्राज्य अपने शिखर पर। इस समय वह फ्रांस का सम्राट, इटली के राज्यों का राजा, राइन संघ का परिरक्षक था। हॉलैण्ड, वेस्केलिया एवं नेपल्स के राज्यों में उसके भाई राजा थे, रूस मित्र था, ऑस्ट्रिया तथा प्रशा कुचले जा चुके थे, बच गया था सिर्फ इंग्लैण्ड।

नेपोलियन की महाद्वीपीय व्यवस्था (Continental System)

नेपोलियन के साम्राज्यवादी विस्तार में सबसे बड़ी बाधा इंग्लैण्ड था और यूरोप में ब्रिटेन ही ऐसी शक्ति था, जिसे नेपोलियन नहीं हरा सका था, क्योंकि ब्रिटेन की नौसैनिक शक्ति फ्रांस के मुकाबले श्रेष्ठ थी। अत: नेपोलियन ने इंग्लैण्ड को परास्त करने के लिए उसे आर्थिक दृष्टि से पंगु बना देने की नीति अपनाई। वस्तुत: उसने इंग्लैण्ड के विरुद्ध आर्थिक युद्ध का सहारा लिया और इसी क्रम में उसने महाद्वीपीय व्यवस्था को अपनाया।

नेपोलियन अच्छी तरह जानता था कि सैन्य दृष्टि से इंग्लैण्ड को पराजित करना संभव नहीं, क्योंकि इंग्लैण्ड की असली शक्ति तो उसके उन्नत उद्योगों में निहित थी। यदि इन उद्योगों के उत्पादित सामानों का यूरोपीय बाजार अवरुद्ध कर दिया जाए, तो ये उद्योग स्वमेव बंद हो जाएंगे और वहां बेकारी की समस्या पैदा हो जाएगी। उसका मानना था कि व्यापार पर निर्भर इंग्लैण्ड की आर्थिक नाकेबंदी करने से वस्तुओं की कीमतें गिरेंगी और इंग्लैण्ड की अर्थव्यवस्था ध्वस्त होने लगेगी। दूसरी तरफ महाद्वीप को इंग्लैण्ड के लिए बंद करके इंग्लैण्ड को फ्रांस से खाद्य पदार्थ खरीदने को बाध्य कर उससे बहुमल्य धातु (बुलियन) ले सकेगा। इससे इंग्लैण्ड की आर्थिक स्थित खराब हो जाएगी और फ्रांस उस पर विजय प्राप्त कर सकेगा।

इस विचार के साथ नेपोलियन ने बर्लिन आदेश, मिलान आदेश, फातबल्लों आदेश द्वारा महाद्वीपीय व्यवस्था को लागू करने का प्रयास किया। इन आदेशों के जरिए उसने अपने अधीनस्थ राज्यों को इंग्लैण्ड से व्यापार करने की मनाही कर दी और यह भी स्पष्ट कर दिया कि जो राज्य या राजा इस आदेश का उल्लंघन कर इंग्लैण्ड के साथ प्रत्यक्ष या परोक्ष व्यापार करेंगे उनके खिलाफ युद्धजनित कार्यवाही की जाएगी।

इंग्लैण्ड ने नेपोलियन की महाद्वीपीय व्यवस्था का सामना करने के लिए Order in Council पास कर फ्रांस से व्यापारिक संबंध विच्छेद कर लिया तथा तटस्थ देशों को भी ऐसा करने को कहा।

❐ परिणाम

महाद्वीपीय व्यवस्था अपने उद्देश्य को प्राप्त करने में असफल रही। ब्रिटिश व्यापार को नष्ट करना इसा उद्देश्य था, जो पूरा नहीं हो सका। इंग्लैण्ड की परेशानी से भी कठिन परेशानी स्वयं फ्रांस को झेलनी पड़ी।

महाद्वीपीय व्यवस्था स्वयं नेपोलियन व यूरोप के लिए आत्मघाती हुई। इस योजना को लागू करने के लिए नेपोलियन ने अनेक देशों के खिलाफ कठोर कदम उठाए। फलत: वह घातक आक्रामक युद्धों में उलझाता चला गया और उसके साम्राज्य का विघटन हुआ। वस्तुत: महाद्वीपीय व्यवस्था को सफल बनाने के लिए पुर्तगाल पर नियंत्रण आवश्यक था, क्योंकि ब्रिटेन का माल पुर्तगाली समुद्र तटों से ही यूरोप में चोरी-छीपे पहुंचाया जाता था। पुर्तगाल पर नियंत्रण के लिए स्पेन के साथ युद्ध आवश्यक हो गया। उन दोनों जगहों पर नेपोलियन ने कब्जा तो कर लिया, किन्तु फ्रांस के साधनों पर अत्यधिक दबाव बढ़ा और स्पेन के राष्ट्रवादी विस्फोट ने नेपोलियन के साम्राज्य को छिन्न-भिन्न कर दिया और उसके पतन की राहें खोल दी। इसी संदर्भ में नेपोलियन ने कहा कि स्पेन के सैनिक घावों ने मुझे बर्बाद कर दिया।

❐ महाद्वीपीय व्यवस्था की असफलता के कारण

- नेपोलियन के पास एक सक्षम नौसेना का अभाव था, जिसके कारण वह इंग्लैण्ड के सामुद्रिक व्यापार के नाकेबंदी पूर्णरूप से नहीं कर सका और तस्करी (Smuggling) को भी नहीं रोक पाया।
- इस व्यवस्था से यूरोप में वस्तुओं का संकट पैदा हो गया। व्यापारियों का व्यापार चौपट होने लगा। कारण था - फ्रांस के कारखानों का उतना विकसित नहीं हो पाना कि वे सभी वस्तुओं का उत्पादन कर सकें और यूरोपीय जनता की आवश्यकता की पूर्ति हो सके। फलत: तस्कर व्यापार में वृद्धि हुई और तटस्थ राज्यों में चोरी-छिपे माल पहुंचाने लगा।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

- नेपोलियन ने महाद्वीपीय व्यवस्था की घोषणा करते हुए कहा था कि यदि यूरोपीय देश इंग्लैण्ड की समुद्री निरंकुशता से बचना चाहते हैं, तो यूरोप को अस्थायी रूप से कष्ट सहना पड़ेगा। तब नेपोलियन स्वयं कुछ चिजों के व्यापार का लाइसेंस देने लगा और चुंगी लगाने लगा, तो स्पष्ट हो गया कि परेशानी यूरोप को उठानी है फ्रांस को नहीं। नेपोलियन के वाणिज्यिक नियंत्रण के प्रति तुर्की, पुर्तगाल, स्पेन, रूस, हॉलैण्ड में विरोध प्रदर्शन होने लगे। धीरे-धीरे इन देशों ने इंग्लैण्ड से अपने संबंध विकसित किए।
- नेपोलियन इस बात को भूल गया कि यूरोप से बाहर ब्रिटेन के अनेक उपनिवेश स्थापित हैं और जब तक दुनियाभर में फैले उसके उपनिवेशों पर प्रतिबंध नहीं लगा दिया जाता तब इस व्यवस्था के सफल होने की आशा करना व्यर्थ था।
- इंग्लैण्ड में अन्न का अभाव था, परन्तु नेपोलियन उसके धन को कम करने के लिए बराबर भी मूल्य पर अन्न भेजता रहा। यदि इंग्लैण्ड में यह अन्न पहुंचता, तो वहां जनता भूख से त्रस्त हो उठती और संभवत: विवश होकर इंग्लैण्ड संधि करता।
- नेपोलियन एक तानाशाह बनकर इसी नियम को अपने देश में तो लागू कर सकता था, किन्तु दूसरे देशों पर ऐसे नियम को लागू करने के लिए अधिक समय तक दबाव बनाना संभव नहीं था।

❐ नेपोलियन का पतन

नेपोलियन को उसकी महाद्वीपीय प्रणाली ने साथ कई युद्धों में उलझने के लिए विवश कर दिया। यहां से उसके पतन की शुरुआत होती है। 1808 ई. में उसने पूर्तगाल को पराजित किया, क्योंकि पुर्तगाल से इंग्लैण्ड के घनिष्ठ व्यापारिक संबंध थे। साथ ही उसके लम्बे समुद्र तट पर अधिकार करना जरूरी था, ताकि महाद्वीपीय प्रणाली की दरारों को चारा जा सके। नेपोलियन ने वस्तुत: स्पेन के साथ मिलकर पुर्तगाल पर आक्रमण किया था।

स्पेन का नासूर

स्पेन ने समय-समय पर फ्रांस को सहायता दी थी। इस समय स्पेन का शासक चार्ल्स IV था, किन्तु उसके निष्क्रिय शासन के स्थान पर जनता उसके पुत्र राजकुमार फर्डिनेण्ड को शासक बनाना चाहती थी। अत: चार्ल्स ने फर्डिनेण्ड के पक्ष मे पद त्याग दिया। इसी समय नेपोलियन ने फर्डिनेण्ड को एक तरह से नजरबन्द कर अपने भाई नेपल्स के राजा जोजफ को स्पेन का राजा बनाया (1808 ई.) और नेपल्स अपने बहनोई म्यूरा को दे दिया।

वस्तुत: पुर्तगाल में फ्रांस व स्पेन के संयुक्त अभियान के कारण नेपोलियन को फ्रांसीसी सेनाएं स्पेन में भेजने का अवसर मिल गया और मौका देख उसने स्पेन पर अधिकार कर लिया।

नेपोलियन के इस कदम से स्पेनिश जनता अपमानित महसूस कर रही थी। स्पेनवासियों में राष्ट्रीय भावना का संचार हुआ और पूरा राष्ट्र नेपोलियन के विरुद्ध उठ खड़ा हुआ। जगह-जगह प्रबंध समितियां स्थापित की जाने लगीं, पोप के शत्रु के विनाश का अच्छा अवसर देखते हुए कैथोलिक पादरियों ने लोगों को उकसाना शुरू किया। Zunta नामक संगठन ने गुरिल्ला पद्धति से लड़ने के लिए लोगों को प्रशिक्षित करना आरंभ कर दिया। स्पेनिश जनता की नजर में नेपोलियन राष्ट्रीय एकता का संहारक और राजमुकुट का विनाशक था। अत: उन्होंने गुरिल्ला युद्ध शुरू कर दिया। यह युद्ध 1808 ई. से 1814 ई. तक चलता रहा।

जुलाई 1808 ई. में बेलन के युद्ध में फ्रांसीसी सेना पराजित हुई। नेपोलियन की सेना की यह स्थल में प्रथम पराजय थी। उससे स्पेनवासियों का उत्साह बढ़ा और पूरे यूरोप में सनसनी फैल गई। जोजेफ स्पेन छोड़ भाग खड़ा हुआ। ऐसी स्थिति में नेपोलियन ने स्पेन पर हमला किया और उसे पराजित कर पुन: जोजफ को सिंहासन पर बैठाया। स्पेन में फंसे रहने के कारण साम्राज्य पर वह ध्यान नहीं दे पाया। 1808 ई. में यूरोपीय गतिविधियों के कारण नेपोलियन को एक बड़ी सेना स्पेन में छोड़ मध्य यूरोप की ओर जाना पड़ा। इसके बाद उसका स्पेन आना संभव नहीं हुआ। स्पेन में राष्ट्रवादी पुन: सक्रिय हो गए और जोजफ का शासन लड़खड़ाने लगा। इंग्लैण्ड ने स्पेन को समर्थन देकर कई स्थानों पर फ्रांसीसी सेना को परास्त किया और अंतत: स्पेन फ्रांसीसी आधिपत्य से मुक्त हुआ।

स्पेन का युद्ध नेपोलियन के लिए अत्यन्त विनाशकारी साबित हुआ। एक तरफ इसने जहां नेपोलियन के लाखों सैनिकों व योग्य सेनापतियों को नष्ट कर दिया तो दूसरी तरफ युद्ध में रहने के कारण शेष यूरोप की ओर ध्यान भी नहीं दे सका। स्पेन की विजय ने नेपोलियन की अपराजेयता के मिथक को तोड़ा और यूरोप में सोई हुई राष्ट्रीयता की भावना को जगाया। इसी राष्ट्रवाद की भावना से प्रेरित होकर आगे ऑस्ट्रिया ने फ्रांस के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। इस प्रकार स्पेनिश युद्ध के संदर्भ नेपोलियन का यह कहना ठीक

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

है कि स्पेन के नासूर ने मुझे बर्बाद कर दिया।

स्पेन की सफलता के कारण

स्पेन के सैनिक गुरिल्ला सैनिक थे और फ्रांसीसी सेनाओं को इस युद्ध का अनुभव नहीं था।

जिस क्रांति की भटकी दिशा ने नेपोलियन को जन्म दिया था, वहीं क्रांति का ज्वार अब नेपोलियन के समक्ष था, जिसका सामना वह नहीं कर सका।

स्पेन की भौगोलिक स्थिति फ्रांसीसी सैनिकों के लिए परेशानी का सबब रही।

स्पेन का इंग्लैण्ड से सैन्य व आर्थिक मदद मिलती रही।

कैथोलिक पादरियों ने जनमत को नेपोलियन के विरुद्ध उकसाया।

मास्को अभियान (1812 ई.)

नेपोलियन की साम्राज्यवादी आकांक्षा तथा महाद्वीपीय व्यवस्था के प्रश्न पर रूस के साथ उसके संबंध पुनः बिगड़ गए। फलस्वरूप 1812 ई. में नेपोलियन ने रूस पर आक्रमण कर दिया। नेपोलियन की सेना ने नीमेन नदी पर कर रूस की सीमा में प्रवेश किया। रूसी सेनाअओं ने फसलों, भण्डारों को नष्ट करते हुए पीछे हटने तथा छापामार हमले करते रहने की नीति अपनाई। अनेक कठिनाइयों का सामना करते हुए किसी तरह जब नेपोलियन मास्को पहुंचा, तो उसने पूरे शहर को वीरान पाया। वास्तव में अभी तक फ्रांसीसी सेना अपना खर्च पराजित प्रदेशों से निकालती थी, किन्तु इस युद्ध पद्धति और रणनीति से यह संभव नहीं हो सका। नेपोलियन को आशा थी कि जार आत्मसमर्पण कर देगा, परन्तु जार आत्मसमर्पण करने की बजाय साइबेरिया चला गया। नेपोलियन मास्को में लगभग दो महीने तक शांति प्रस्ताव की प्रतीक्षा में रहा, तभी उसके सैनिकों के लिए खाद्य सामग्री का संकट पैदा हो गया तथा महामारी फैल गई। अतः नेपोलियन को लाचार होकर मास्को से लौटना पड़ा। लौटती हुई सेना को भूख, ठंड और रूसियों ने परेशान किया। इस तरह जब नेपोलियन ने रूस की सीमा छोड़, तब वह अपने 6 लाख में से 5 लाख सैनिक खो चुका था। इस तरह से यह अभियान निरर्थक सिद्ध हुआ। इसकी असफलता का कारण नेपोलियन की हठधर्मिता और रूसी सैनिकों की पीछे हटने की कूटनीति को न समझ पाना था।

रूस में नेपोलियन की असफलता का समाचार पाते ही जर्मनी मे फ्रांस से प्रतिशोध लेने की भावना जागने लगी। लोग देश को नेपोलियन के नियंत्रण से मुक्त करने के लिए संघर्ष के लिए तैयार हो गए। राष्ट्रीयता का जबर्दस्त उबाल आया। इस तरह 1813 ई. में प्रशा ने फ्रांस के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। प्रशा की सेना को नेपोलियन ने पीछे ढकेल दिया।

1813 ई. में प्रशा, ऑस्ट्रिया, इंग्लैण्ड, रूस तथा स्वीडन ने मिलकर नेपोलियन के विरुद्ध एक गुट का निर्माण किया और नेपोलियन के विरुद्ध जर्मनी के 'लिपज़िंग के युद्ध' में उसे पराजित किया। इसे War of Nations यानी 'राष्ट्रों के युद्ध' के नाम से जाना जाता है। लिपजिंग की पराजय ने नेपोलियन के समूचे तंत्र को ध्वस्त कर दिया, महाद्वीपीय व्यवस्था समाप्त हो गई। अन्ततः नेपोलियन ने आत्मसमर्पण कर दिया और फ्रांस के सिंहासन से अपने समस्त अधिकार त्याग दिए। उसे इटली के पश्चिम में 'एल्बा द्वीप' देकर वहां का शासक बना दिया गया। इधर, फ्रांस में लुई 18वें को सम्राट नियुक्त किया गया।

नेपोलियन से छुटकारा पाने के बाद यूरोप की समस्याओं को सुलझाने के लिए 1814 ई. में ऑस्ट्रिया की राजधानी वियना में मैटरनिक की अध्यक्षता में एक सम्मेलन हुआ, जिसे 'वियना कांग्रेस' के नाम से जाना जाता है। फ्रांस की भौगोलिक सीमा वही रखी गई, जो 1792 ई. में थी और वहां बूर्वो वंश के शासक को पुनर्स्थापित किया गया।

फ्रांस में लुई 18वें के अव्यवस्थित शासन से जनता असंतुष्ट थी। नेपोलियन को इन परिस्थितियों की सूचना मिली, तो एक बार पुनः वह फ्रांस पर अधिकार करने के लिए मार्च, 1815 ई. में एल्बा से चलकर फ्रांस आया। वहां की जनता ने उसका स्वागत किया। अतः लुई 18वां फ्रांस छोड़कर भाग गया और नेपोलियन पुनः फ्रांस का सम्राट बन बैठा, किन्तु उसके बाद महज 100 दिन ही वह शासन कर सका।

नेपोलियन के पुनः गद्दी प्राप्त करने की सूचना जब यूरोप में पहुंची, तो सब लोग चौकन्ने हो गए। वियना कांग्रेस को एक बार फिर नेपोलियन के भूत का भय सताने लगा। अतः अपने मतभेद भूलकर एकजुट हो नेपोलियन का मुकाबला करने का निश्चय किया। अतः जून, 1815 ई. में नेपोलियन और मित्र राष्ट्रों के बीच अंतिम निर्णायक युद्ध 'वाटरलू के मैदान' में हुआ, जिसमें नेपोलियन पराजित हुआ। उसे बंदी बनाकर सुदुर अटलांटिक महासागर के सुनसान द्वीप सेंट हेलेना में निर्वासित जीवन जीने को भेज दिया और वहीं 6 वर्ष

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

बाद 2 मई, 1821 ई. को उसकी मृत्यु हो गई।

❒ नेपोलियन के पतन के कारण

- **युद्ध दर्शन**

वस्तुतः नेपोलियन का उद्‌भव एक सेनापति के रूप में हुआ और युद्ध ने ही उसे फ्रांस की गद्‌दी दिलवाई थी। इस तरीके से युद्ध उसके अस्तित्व के लिए अनिवार्य पहलू हो गया था। उसने कहा भी ''जब यह युद्ध मेरा साथ न देगा, तब मैं कुछ भी नहीं रह जाऊंगा, तब कोई दूसरा मेरी जगह ले लेगा।'' निरंतर युद्धरत रहना और उसमें विजय प्राप्त करना उसके अस्तित्व के लिए जरूरी था। किन्तु युद्ध के संदर्भ में एक सार्वभौमिक सत्य यह है कि युद्ध समस्याओं का हल नहीं हो सकता और न अस्तित्व का आधार। इस तरह नेपोलियन परस्पर विरोधी तत्वों को साथ लेकर चल रहा था। अतः जब मित्र राष्ट्रों ने उसे युद्ध में पराजित कर निर्वासित कर दिया, तब इस पराजित नायक को फ्रांस की जनता ने भी भुला दिया। इस संदर्भ में ठीक ही कहा गया है ''कि नेपोलियन का साम्राज्य युद्ध में पनपा, युद्ध ही उसके अस्तित्व का आधार बना रहा और युद्ध में ही उसका अंत होना था।'' दूसरे शब्दों में नेपोलियन के उत्थान में ही उसके विनाश के बीच निहित थे।

- **राष्ट्रवाद की भवना का प्रसार**

नेपोलियन ने साम्राज्यवादी विस्तार कर दूसरे देशों में अपना आधिपत्य जमाया और हॉलैण्ड, स्पेन, इटली आदि में अपने संबंधियों को शासक बनाया। इस तरह दूसरे देशों में नेपोलियन का शासन विदेशी था। राष्ट्रवाद की भावना से प्रभावित होकर यूरोपीय देशों के लिए विदेशी शासन का विरोध करना उचित ही था। राष्ट्रीय विरोध के आगे नेपोलियन की शक्ति टुटने लगी थी और उसे जनता के राष्ट्रवाद का शिकार होना पड़ा।

- **महाद्वीपीय व्यवस्था**

महाद्वीपीय नीति नेपोलियन के लिए आत्मघाती सिद्ध हुई। इस व्यवस्था ने नेपोलियन को अनिवार्य रूप से आक्रामक युद्ध नीति में उलझा दिया, जिसके परिणाम विनाशकारी हुए। उसे भारी किमत चुकानी पड़ी, इसी संदर्भ में उसे स्पेन व रूस के साथ संघर्ष करना पड़ा।

- **नेपोलियन की व्यक्तिगत भूले**

स्पेन की शक्ति को कम समझना, मोस्को अभियान में अत्यधिक समय लगाना, वाटरलू की लड़ाई के समय आक्रमण में ढील देना आदि उसकी भयंकर भूले थीं। इसी संदर्भ में नेपोलियन ने कहा कि ''मैंने समय नष्ट किया और समय ने मुझे नष्ट किया।'' इतना ही नहीं नेपोलियन ने इतिहास की धार को उलटने की कोशिश की। वस्तुतः फ्रांसीसी क्रांति ने जिस सामंती व्यवस्था का अंत कर कुलीन तंत्र पर चोट कर राजतंत्र को हटा गणतंत्र की स्थापना की थी। नेपोलियन ने पुनः उसी व्यवस्था को स्थापित करने का प्रयास किया और कई जगह अपने ही बंधु-बांधवों को सत्ता सौंप वंशानुगत राजतंत्र की स्थापना की। क्रांति ने जिस राष्ट्रवाद को दबा दिया, नेपोलियन ने दूसरे देशों में उसी राष्ट्रवाद को कुचलने का प्रयास किया। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि जिन तत्वों से उसका साम्राज्य निर्मित था, उन्हीं तत्वों ने उसका विनाश भी कर दिया।

- **स्पेन का नासूर**
- **फ्रांस की नौसैनिक दुर्बलता**

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

औद्योगिक क्रांति
Industrial Revolution

❐ अर्थ

औद्योगिक क्रांति शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग इंग्लैण्ड के ऑर्नाल्ड टायनबी ने किया था। औद्योगिक क्रांति से तात्पर्य उत्पादन प्रणाली में हुए आधारभूत परिवर्तनों से है। इसके परिणामस्वरूप जनसाधारण को घरेलू उद्योग धंधों को छोड़कर नए प्रकार के वृहद उद्योगों में काम करने तथा यातायात के नवीन साधनों के प्रयोग का अवसर मिला। आर्थिक क्षेत्र में हुए इन परिवर्तनों ने राजनीतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण परिवर्तनों को जन्म दिया।

औद्योगिक क्रांति कोई आकस्मिक घटना नहीं है, अपितु विकास की एक सतत् प्रक्रिया है। इस प्रकार औद्योगिक क्रांति के प्रारंभ की कोई निश्चित तिथि नहीं है, साथ ही यह प्रक्रिया वर्तमान में भी चल रही है। वस्तुत: औद्योगिक क्रांति शब्द का प्रयोग इसलिए नहीं किया जाता है कि इसकी प्रक्रिया अत्यन्त तीव्र थी, बल्कि इसलिए किया जाता है कि इससे उत्पन्न हुए परिवर्तन अत्यन्त व्यापक एवं आधारभूत थे।

औद्योगिक क्रांति का प्रारंभ सर्वप्रथम इंग्लैण्ड में हुआ, फिर इसका प्रसार धीरे-धीरे विश्व के शेष भागों में भी हुआ। 1750 ई. से 1850 ई. के मध्य इंग्लैण्ड में आर्थिक क्षेत्र में कई महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए, जैसे -

1) घरेलू उत्पादन पद्धति का स्थान कारखाना उत्पादन पद्धति ने ले लिया।
2) उत्पादन संबंधी अनेक कार्य, जो पहले हाथ से किए जाते थे, अब वाष्पचालित यंत्रों से किए जाने लगे।
3) यातायात व संचार के आधुनिक साधनों का उपयोग किया जाने लगा।
4) देश के आन्तरिक व बाह्य व्यापार में काफी वृद्धि हुई।

इतिहासकारों ने इन परिवर्तनों को ही औद्योगिक क्रांति की संज्ञा दी है। आर्थिक क्षेत्र में हुए इन परिवर्तनों ने आगे चलकर राजनीतिक, सामाजिक व सांस्कृतिक क्षेत्र में भी कई महत्वपूर्ण परिवर्तनों को जन्म दिया। जैसे -

1) राजनीतिक क्षेत्र में प्रजातंत्र की मांग की जाने लगी तथा साम्राज्यवाद व उपनिवेशवाद की प्रक्रिया तीव्र हो गई।
2) सामाजिक क्षेत्र में सबसे महत्वपूर्ण परिवर्तन नवीन वर्गों का उद्‌भव था। औद्योगिक क्रांति के परिणामस्वरूप पूंजीपति वर्ग एवं श्रमिक का उदय हुआ।
3) सांस्कृतिक क्षेत्र में भी कई मौलिक परिवर्तन हुए। औद्योगिक क्रांति से पुराने रहन-सहन के तरीकों, वेश-भूषा, रीति-रिवाज, कला-साहित्य एवं धार्मिक संरचना में भी महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए।

इस प्रकार औद्योगिक क्रांति को क्रांति की संज्ञा, परिवर्तनों की तीव्रता के कारण नहीं, बल्कि इसके आधारभूत, दीर्घकालिक एवं व्यापक प्रभावों के कारण दी जाती है।

❐ कारण

औद्योगिक क्रांति को प्रेरित करने वाले अनेक कारण हैं, जिन्हें निम्नलिखित बिन्दुओं के अन्तर्गत देखा जा सकता है -

1) **पुनर्जागरण एवं भौगोलिक खोज** - पुनर्जागरण ने भौगोलिक खोजों को प्रोत्साहित किया, जिससे यूरोप के लोगों को भौतिक एवं मानव संसाधन का एक विस्तृत खजाना प्राप्त हो गया। भौतिक समृद्धि एवं मानव संसाधन की सुलभता ने औद्योगिक क्रांति की पृष्ठभूमि तैयार कर दी।
2) **धर्म सुधार आन्दोलन** - धर्म सुधार आन्दोलन से लोगों के व्यक्तिगत जीवन पर धर्म का नियंत्रण कम हुआ। इससे लोगों को वैचारिक एवं व्यक्तिगत स्वतंत्रता प्राप्त हुई। मानव का रुझान भौतिकवाद की ओर बढ़ा। परिणामस्वरूप मानव आर्थिक क्षेत्र में साहसिक परिवर्तनों की ओर आगे बढ़ा। इन्हीं परिवर्तनों ने औद्योगिक क्रांति को जन्म दिया।
3) **तकनीकी क्रांति** - पुनर्जागरण के परिणामस्वरूप तर्क व बुद्धि का महत्व बढ़ा, जिससे वैज्ञानिक सिद्धान्तों का आविष्कार हुआ। जब इन वैज्ञानिक सिद्धान्तों का प्रयोग तकनीकी में हुआ, तब नवीन तकनीकी एवं प्रौद्योगिकी अस्तित्व में आई। इस नवीन तकनीकी एवं प्रौद्योगिकी ने औद्योगिक क्रांति की आधारशिला निर्मित कर दी।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

4) **व्यावसायिक क्रांति** - भौगोलिक खोजों के परिणामस्वरूप यूरोप के व्यापारियों को विदेशों में नवीन बाजार प्राप्त हुए, जिससे उनके वाणिज्य-व्यवसाय में अत्यधिक वृद्धि हुई। इस व्यवसायिक क्रांति के कारण यूरोप के व्यापारियों के पास भारी धन-संपदा संचित हो गई। इस अतिरिक्त धन ने व्यापारिक पूंजी का औद्योगिक पूंजी में रूपान्तरण का मार्ग प्रशस्त किया, जिसका उपयोग औद्योगिक विकास में हुआ।

5) **जनसंख्या क्रांति** - 17वीं एवं 18वीं शताब्दी में यूरोप की जनसंख्या में अत्यधिक वृद्धि हुई। जनसंख्या वृद्धि ने औद्योगीकरण को मुख्यत: 3 प्रकार से प्रोत्साहित किया - प्रथम, जनसंख्या वृद्धि के कारण दैनिक उपयोग की वस्तुओं की मांग में भारी वृद्धि हुई, जिसकी आपूर्ति परम्परागत् कुटीर उद्योग से संभव नहीं थी, परिणामस्वरूप बड़े स्तर पर उत्पादन हेतु मशीन एवं कारखाना आधारित उद्योगों की आवश्यकता महसूस हुई। द्वितीय, जनसंख्या वृद्धि के कारण उद्योगों हेतु सस्ता श्रम प्राप्त हो सका। तृतीय, जनसंख्या वृद्धि ने उद्योगों के लिए एक बड़ा बाजार भी उपलब्ध कराया।

6) **कृषि क्रांति** - 17वीं एवं 18वीं शताब्दी में यूरोप में कृषि क्षेत्र में महत्वपूर्ण प्रगति हुई। कृषि क्षेत्र में हुई प्रगति ने औद्योगीकरण को मुख्यत: 2 प्रकार से प्रोत्साहित किया। प्रथम, उद्योगों हेतु कच्चा माल बहुतायत में प्राप्त हो सका। द्वितीय, कृषिगत विकास ने ग्रामीण क्षेत्रों में भी समृद्धि लाई, जिससे उद्योगों को शहरों के साथ-साथ गांवों में भी एक बड़ा बाजार प्राप्त हो सका।

7) **यातायात व संचार क्रांति** - तकनीकी क्षेत्र में हुए विकास के कारण यातायात व संचार व्यवस्था में भी सुधार हुआ। इससे उद्योगों को न केवल कच्चा माल प्राप्त करने में, बल्कि निर्मित वस्तुओं को बाजार तक पहुंचाने में भी आसानी हुई। स्पष्ट है कि यातायात व संचार क्रांति ने औद्योगिक क्रांति का आधार निर्मित कर दिया।

8) **फ्रांसीसी क्रांति** - 1789 ई. की फ्रांसीसी क्रांति ने औद्योगिक क्रांति के प्रारंभ एवं विकास में महत्वपूर्ण सहयोग दिया। यूरोप के अधिकांश राष्ट्रों में निरंकुश राजतंत्र और सामंती व्यवस्था के कारण वाणिज्य-व्यापार में कई प्रकार के प्रतिबंध लगे हुए थे, जिससे वहां आर्थिक प्रगति की संभावना क्षीण थी। फ्रांस की क्रांति ने सम्पूर्ण यूरोप में नवीन मध्यम वर्ग उदय तथा उदारवादी व प्रजातांत्रिक पद्धति की लोकप्रिय में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। नवोदित मध्यम वर्ग ने आर्थिक संरचना में महत्वपूर्ण परिवर्तनों को जन्म दिया, परिणामस्वरूप औद्योगिक क्रांति की प्रक्रिया प्रारंभ हुई।

9) **राष्ट्रवाद का उदय** - राष्ट्रीयता की भावना 19वीं सदी में प्रखर रूप से सामने आने लगी थी। भौगोलिक खोजों, विज्ञान एवं तकनीकी क्षेत्र में हुई प्रगति तथा अंतर्राष्ट्रीय व्यापार से आई समृद्धि से किसी राष्ट्र की शक्ति एवं हैसियत का आकलन किया जाने लगा। जब इंग्लैण्ड में औद्योगिक क्रांति हुई और उसने यूरोप में अपनी सर्वश्रेष्ठता स्थापित कर ली, तो यूरोप के अन्य राष्ट्र भी राष्ट्रवादी भावना से प्रेरित होकर औद्योगिक विकास की ओर आगे बढ़े।

10) **आधुनिक एवं व्यवसायिक शिक्षा** - पुनर्जागरण तथा प्रबोधन के परिणामस्वरूप परम्परागत शिक्षा पद्धति की जगह अन्वेषणात्मक एवं व्यवसायिक शिक्षा को महत्व दिया जाने लगा, जिससे एक नवीन पीढ़ी का जन्म हुआ। इस नई पीढ़ी ने परम्परागत उत्पादन पद्धति की जगह नवीन उत्पादन पद्धति की ओर सोचा एवं कई प्रयोग किए। इस प्रकार यूरोप औद्योगीकरण की ओर आगे बढ़ा।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

❐ औद्योगिक क्रांति का प्रारम्भ इंग्लैण्ड से ही क्यों?

सामान्यत: यह प्रश्न उठता है कि औद्योगिक क्रांति सर्वप्रथम इंग्लैण्ड में ही क्यों हुई? जबकि औद्योगिक क्रांति के समय यूरोप के अन्य देशों में भी पूंजी एवं मानव संसाधन पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध था। हॉलैण्ड जैसे देश भौगोलिक खोजों एवं व्यापार-वाणिज्य में इंग्लैण्ड से भी आगे थे। फ्रांस का भू-भाग, जनसंख्या व व्यापार इंग्लैण्ड से ज्यादा था तथा उसके पास रेशम, पटसन, कोयला, लोहा, जलशक्ति के भी प्रचुर साधन थे। बावजूद इसके औद्योगिक क्रांति की शुरुआत इंग्लैण्ड से ही हुई। वस्तुत: इसके पीछे निम्नलिखित कारण उत्तरदायी थे –

1) **शांति एवं व्यवस्था** – 1688 ई. की Glofious Revolution के बाद इंग्लैण्ड में संवैधानिक राजतंत्र स्थापित हुआ था। इसके विपरीत यूरोप के ज्यादातर राज्यों में निरंकुश राजतंत्र व सामंतों का बोल-बाला था। जब यूरोप के अन्य देश गृहयुद्ध तथा बाहरी आक्रमणों से आतंकित थे, तब इंग्लैण्ड में राजनीतिक स्थिरता एवं शांति थी। यद्यपि 18वीं शताब्दी में इंग्लैण्ड को कई युद्धों में भाग लेना पड़ा, किन्तु ये युद्ध इंग्लैण्ड की भूमि पर नहीं लड़े गए। इन समस्त कारणों से इंग्लैण्ड में व्यापार एवं उद्योगों के विकास हेतु बेहतर परिस्थितियां मौजूद थीं, परिणामस्वरूप सर्वप्रथम औद्योगिक क्रांति वहीं हुई।

2) **शासक वर्ग व समाज का चरित्र** – इंग्लैण्ड में जब भी कभी व्यवसायिक पूंजीवाद एवं औद्योगिक पूंजीवाद के मध्य टकराहट हुई, तो शासक वर्ग द्वारा निर्णय औद्योगिक पूंजीवाद के पक्ष में लिया गया। उदाहरणार्थ – भारत के संदर्भ में 1813 का चार्टर अधिनियम लाकर ईस्ट इंडिया कंपनी का व्यापारिक एकाधिकार समाप्त कर भारत का दरवाजा अन्य ब्रिटिश कंपनियों हेतु भी खोल दिया गया। इसी प्रकार अन्य यूरोपीय राष्ट्रों के मुकाबले इंग्लैण्ड का समाज अधिक जागरूक व परिवर्तन समर्थक था। क्रिस्टहोपर हिल ने सच ही कहा है कि ब्रिटेन में स्पीनिंग जेनी सफल हुई जबकि फ्रांस में असफल, क्योंकि ब्रिटेन में इसे सामाजिक स्वीकृति प्राप्त हुई जबकि फ्रांस में केवल सरकारी स्वीकृति।

3) **भौगोलिक स्थिति** – इंग्लैण्ड की अनुकूल भोगौलिक स्थिति औद्योगिक क्रांति में सहायक सिद्ध हुई। इंग्लैण्ड चारों ओर से समुद्र से घिरा था, जिससे वहां बंदरगाहों के निर्माण में आसानी हुई। फलत: व्यापारिक आवागमन में सुविधा हुई। साथ ही परिवहन की सस्ती और अच्छी सुविधाएं भी प्राप्त हो सकी। इससे आंतरिक और विदेशी परिवहन को बढ़ावा मिला। इंग्लैण्ड की नम जलवायु कपड़ा उद्योग के लिए उपयुक्त थी।

4) **सुदृढ़ नौ-सैनिक शक्ति** – समुद्री क्षेत्र से घिरा होने के कारण इंग्लैण्ड में एक शक्तिशाली नौ-सेना का विकास संभव हो सका। इस शक्ति के बल पर इंग्लैण्ड अपना विशाल औपनिवेशिक साम्राज्य स्थापित करने में सफल रहा। साथ ही युद्धकाल में भी इंग्लैण्ड के व्यापार पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ा। इस प्रकार की स्थिति यूरोप के अन्य देशों के पास नहीं थी।

5) **प्राकृतिक संसाधनों की प्रचुरता** – इंग्लैण्ड के पास कोयला एवं लोहे के विशाल भंडार थे। साथ ही इंग्लैण्ड का क्षेत्रफल फ्रांस देशों से कम होने के कारण वहां ये दोनों संसाधन पास-पास उपलब्ध थे। इन दोनों खनिजों ने इंग्लैण्ड में औद्योगिक क्रांति को तीव्रता प्रदान की।

6) **इंग्लैण्ड का औपनिवेशिक विस्तार** – अन्य यूरोपीय राष्ट्रों के मुकाबले इंग्लैण्ड का औपनिवेशिक साम्राज्य अधिक विस्तृत था। विस्तृत औपनिवेशिक साम्राज्य के कारण इंग्लैण्ड को उद्योगों हेतु सस्ता कच्चा माल तथा निर्मित माल हेतु विस्तृत बाजार प्राप्त हो सका। कच्चे माल और बाजार की उपलब्धता ने पूंजीपतियों को उद्योगों में धन लगाने के लिए प्रोत्साहित किया। इस प्रकार इंग्लैण्ड में ही सर्वप्रथम औद्योगिक क्रांति संभव हो सकी।

7) **कृषि क्रांति** – इंग्लैण्ड में औद्योगिक क्रांति से पूर्व कृषि क्रांति सम्पन्न हो चुकी थी। इससे वहां छोटे-छोटे खेतों को मिलाकर बड़े-बड़े फार्मों में सामेकित कर दिया गया था। इन बड़े-बड़े कृषि फार्मों में मशीनों की सहायता से खेती की जाने लगी, जिससे खेतिहर मजदूर बेकार हो गए। फलस्वरूप इंग्लैण्ड में उद्योगों के विकास हेतु सस्ता श्रम प्राप्त हो सका। साथ ही कृषि क्रांति ने उद्योगों हेतु सस्ता काच्चा माल भी उपलब्ध कराया।

8) **जनसंख्या क्रांति** – 18वीं शताब्दी के मध्य में प्राय: सम्पूर्ण यूरोप की जनसंख्या में वृद्धि देखी गई, किन्तु जनसंख्या वृद्धि का लाभ औद्योगिक क्षेत्र में केवल इंग्लैण्ड ने ही प्राप्त किया। जहां यूरोप के अन्य देशों के धनवान लोगों ने जनसंख्या वृद्धि से प्राप्त अतिरिक्त श्रम को कृषि क्षेत्र में लागाया, वहीं इंग्लैण्ड में अतिरिक्त जनसंख्या का उपयोग औद्योगिक क्षेत्र में किया गया।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

9) **व्यवसायिक क्रांति** – औद्योगिक विकास के लिए पूंजी की पर्याप्त उपलब्धता आवश्यक है। व्यवसायिक क्रांति का लाभ लेने वाले राष्ट्रों में इंग्लैण्ड अग्रणी था। इंग्लैण्ड में भारत, अमेरिका जैसे उपनिवेशों के माध्यम से अत्यधिक धन का संचय हुआ था। वहां व्यापारिक बैंकों ने भी उद्योगों के लिए पूंजी उपलब्ध करवाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस तरह पूंजी उपलब्धता ने इंग्लैण्ड में औद्योगिक क्रांति को संभव बनाया। यद्यपि व्यावसायिक क्रांति का लाभ यूरोप के अन्य देशों के पूंजीपतियों को भी प्राप्त हुआ था, किन्तु उन्होंने इसका प्रयोग भूमि खरीदने, भवन निर्माण, शानो–शौकत इत्यादि कार्यों में किया। वहीं इंग्लैण्ड के पूंजीपतियों ने इस पूंजी का प्रयोग औद्योगिक कार्यों में किया।

10) **वैज्ञानिक प्रगति एवं नए अविष्कार** – ब्रिटेन में वैज्ञानिक वातावरण अन्य देशों से अधिक उपयुक्त था। भिन्न–भिन्न देशों में उत्पन्न हुए वैज्ञानिक विचारों का सर्वप्रथम प्रयोग इंग्लैण्ड ने किया। फलत: इंग्लैण्ड औद्योगिक क्रांति में अग्रणी रहा। ये वैज्ञानिक प्रगति विभिन्न क्षेत्रों में देखी जा सकती है –

a) **वस्त्र उद्योग** – 1743 ई. में **जॉन के** नामक अंग्रेज ने 'फ्लाइंग शटल' नामक कपड़ा बुनने की मशीन का अविष्कार किया, जिससे कपड़ा बुनाई में तेजी आई। इस मशीन के अविष्कार से सूत के मांग में वृद्धि की। इस आवश्यकता की पूर्ति 1764 ई. में **जेम्स हरग्रीव्ज** ने 'स्पिनिंग जेनी' नामक ऐसे चरखे का अविष्कार करके किया, जिसके माध्यम से पहले की तुलना में 8 गुना अधिक सूत काता जा सकता था। 1770 ई. में **रिचर्ड ऑर्कराइट** ने सूत काटने की मशीन 'वाटरफ्रेम' का अविष्कार किया। इस मशीन का संचालन हाथ–पैर के स्थान पर जलशक्ति से होने लगा। इस मशीन के लिए विशाल स्थान की जरूरत थी। अत: इससे कारखाना प्रणली का विस्तार हुआ। आगे चलकर इंग्लैण्ड में वस्त्रोद्योग में **कार्टराइट** द्वारा 'पावरलूम' का आविष्कार किया गया, जिससे बढ़िया किस्म का कपड़ा उत्पादित होने लगा।

b) **लोहा एवं कोयला उद्योग** – मशीन एवं यंत्रों के निर्माण में लोहा एवं कोयले की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। 18वीं सदी के पूर्वार्द्ध में लोहा गलाने के लिए लकड़ी के कोयले का प्रयोग किया जाता था। इससे जंगल कटने लगे, लकड़ी की कमी होने लगी और यह पद्धति खर्चीली थी। अत: 1750 ई. के आसपास **अब्राहिम डर्बी** ने लोहे को गलाकर इस्पात बनाने हेतु पत्थर के कोयले का उपयोग किया। उसी प्रकार जब इस्पात बनाने के लिए पत्थर के कोयले का उत्पादन बढ़ाना जरूरी था, तब 1815 ई. में **हम्फ्रे डेबी** ने 'सेफ्टी–लैम्प' का अविष्कार किया, जिससे खानों के भीतर काम करना सुगम हो गया। फलत: कोयले के उत्पादन में वृद्धि हुई।

c) **परिवहन क्षेत्र में नवीन अविष्कार** – कच्चे माल को कारखानों तक तथा उत्पादित माल को बाजारों तक पहुंचाने में परिवहन एवं यातायात के साधनों में सुधार आवश्यक था। 18वीं सदी के अंत में स्कॉटलैण्ड के एक अभियन्ता **जॉन लुडोमकाडम** ने पत्थर, कंकड और टारकोल के मिश्रण से सड़क निर्माण की नई विधि का अविष्कार किया। स्थल मार्ग के साथ–साथ जलमार्गों का भी विकास किया गया। 1761 ई. में **जेम्स ब्रिंडले** ने मैनेचस्टर से बर्कले तक 11 मील लम्बी नहर बनाई, जिससे कोयले का दाम घटकर आधा हो गया। 1869 ई. में फ्रांसीसी अभियन्ता **फर्डिनेन्ड लैस्सप** ने 'स्वेज नहर' का निर्माण पूरा करवाया, जो भू–मध्यसागर को लाल सागर से मिलाने लगी। इस नहर के बन जाने से यूरोप और भारत के मध्य दूरी एक तिहाई कम हो गई। 1807 ई. में अमेरिकी इंजिनियर **रॉबर्ट फुल्टन** ने 'वाष्पचलित नौका' का अविष्कार किया, जिसने जल परिवहन के क्षेत्र में क्रांति ला दी। उसी प्रकार यद्यपि वाष्प इंजन का अविष्कार 1769 ई. में जेम्स वाट के द्वारा किया जा चुका था, किन्तु प्रारंभ में इसका प्रयोग वस्त्र उद्योग में या खदानों से पानी निकालने में किया जाता था। आगे 1814 ई. में **जॉर्ज स्टीफेंसन** ने रेल के वाष्प इंजन का विकसित रूप तैयार किया और 1830 ई. में मैनचेस्टर से लिवरपूल शहर के बीच प्रथम रेलगाड़ी का संचालन आरंभ हुआ।

d) **संचार व्यवस्था में परिवर्तन** – संचार साधनों के विकास ने भी औद्योगिक क्रांति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। 1850 ई. के दशक में **रोलैण्डहिल** नामक अंग्रेज ने 'आधुनिक डाक व्यवस्था' की नींव डाली। 1844 ई. में अमेरिका निवासी **सैमुअल मोर्स** ने 'तारयंत्र' का आविष्कार किया। 1876 ई. में अमेरिका निवासी **ग्राहम बेल** ने 'टेलीफोन' का अविष्कार कर संचार व्यवस्था में क्रांति ला दी। इसी क्रम में 1901 ई. में ईटली के **मारकोनी** ने 'बेतार के तार' (Wireless) तथा 'रेडियो' का अविष्कार किया, जिसके कारण सूचनाओं का आदान–प्रदान अधिक सुगम हो गया।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

इस प्रकार हम देखते है कि ब्रिटेन में औद्योगिक क्रांति हेतु आवश्यक संसाधन एवं परिस्थितियां उपस्थित थीं। इसके विपरीत फ्रांस में निरंकुश राजतंत्र था, हॉलैण्ड की रुचि वाणिज्यिक कार्यों में ही थी, रूस में जार रूढ़ीवादी एवं परिवर्तन विरोधी था, और यूरोप के अन्य राष्ट्र आर्थिक रूप से अधिक समृद्धशाली नहीं थे। यही कारण है कि यूरोप में सर्वप्रथम औद्योगिक क्रांति इंग्लैण्ड में ही हुई।

❒ आद्योगिक क्रांति का परिणाम/प्रभाव

विश्व इतिहास में मानव समाज को सर्वाधिक प्रभावित करने वाली मुख्यत: 2 क्रांतियां हुई हैं - प्रथम, उत्तर-पाषाण युग में हुई कृषि क्रांति, जिसके परिणामस्वरूप मानव ने शिकार छोड़कर कृषि का पेशा अपनाया। द्वितीय, आधुनिक युग में हुई औद्योगिक क्रांति, जिसके परिणामस्वरूप मानव ने कृषि की बजाय उद्योग एवं व्यवसाय को प्रमुखता से अपनाया। औद्योगिक क्रांति के परिणामों और प्रभावों को निम्नलिखित बिंदुओं के अंतर्गत समझा जा सकता है -

- ***आर्थिक परिणाम***

❖ **सकारात्मक**

1) **उत्पादन एवं व्यापार में वृद्धि** - औद्योगिक क्रांति के परिणामस्वरूप वस्तुओं के उत्पादन एवं व्यापार में गुणात्मक व मात्रात्मक वृद्धि हुई। नवीन वस्तुओं एवं यातायात व संचार के साधनों का प्रयोग कर सकने के कारण मनुष्य का जीवन सुखपूर्ण हुआ।

2) **बैंकिंग एवं मुद्रा प्रणाली का विकास** - औद्योगिक क्रांति ने सम्पूर्ण आर्थिक परिदृश्य को बदल दिया। परम्परागत् बैंकिंग व मुद्रा प्रणाली की जगह आधुनिक बैंकिंग व मुद्रा प्रणाली का विकास हुआ। बैंकों के माध्यम से लेन-देन, चेक, ड्राफ्ट आदि का प्रयोग किया जाने लगा। साथ ही धातु मुद्रा की जगह कागजी मुद्रा का प्रचलन हुआ।

3) **रोजगार के अवसरों में वृद्धि** - औद्योगिक क्रांति के परिणामस्वरूप नवीन उद्योगों की स्थापना हुई। इससे कृषि क्षेत्र में जनसंख्या का दबाव कम हुआ तथा कृषि के अतिरिक्त अब औद्योगिक क्षेत्र में भी लोगों को रोजगार प्राप्त होने लगा।

4) **शहरीकरण** - औद्योगिक क्रांति से उपजे रोजगार के नए अवसरों की तलाश में लोग शहरों की ओर पलायन करने लगे, जिससे शहरीकरण की प्रक्रिया तीव्र हो गई। औद्योगिक केन्द्रों के आस-पास नवीन शहर विकसित हुए। कुछ शहरों का उदय उत्पादन व व्यापारिक केन्द्रों, बंदरगाहों आदि के आसपास भी हुआ। वस्तुत: औद्योगिक क्रांति के परिणामस्वरूप ही इंग्लैण्ड में मेनचेस्टर, लिवरपूल, लीड्स, फ्रांस में लियोन्स, जापान में ओसाका, अमेरिका में डेट्रायट जैसे शहरों का उदय हुआ।

❖ **नकारात्मक**

1) **आर्थिक असंतुलन** - औद्योगिक क्रांति ने राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय दोनों स्तर पर आर्थिक असंतुलन को जन्म दिया। विकसित और पिछड़े देशों के मध्य आर्थिक असमानता की खाई गहरी होती गई। आर्थिक साम्राज्यवाद का नया युग प्रारंभ हुआ, जिसमें औद्योगिकृत राष्ट्र अविकसित राष्ट्रों का शोषण करने लगे।

2) **वैश्विक मंदी के युग का प्रारंभ** - औद्योगिक क्रांति के परिणामस्वरूप राष्ट्रों की आपसी निर्भरता बढ़ी, जिससे आर्थिक क्षेत्र में किसी एक देश में घटने वाली घटना अन्य देशों को भी प्रभावित करने लगी। उदाहरणार्थ - 1929-30 ई. में अमेरिका की आर्थिक मंदी का प्रभाव प्राय: सम्पूर्ण विश्व में देखा गया।

3) **कुटीर उद्योगों का विनाश** - औद्योगिक क्रांति के परिणामस्वरूप परम्परागत् कुटीर उद्योगों का निवाश हो गया। यहां दिलचस्प बात यह है कि कुटीर उद्योगों का पतन औद्योगिक देशों में नहीं, बल्कि औपनिवेशिक देशों में हुआ। दरअसल औद्योगिक देशों में कुटीर उद्योगों के पतन से बेरोजगार हुए लोगों को नवीन उद्योगों में रोजगार मिल गया, किन्तु उपनिवेशों में वैकल्पिक रोजगार की व्यवस्था नहीं हो पाई। इसे भारत के संदर्भ में समझा जा सकता है।

- ***सामाजिक परिणाम***

❖ **सकारात्मक**

1) **सामाजिक कुरीतियों एवं रूढ़ीवादिता मे कमी** - औद्योगिक क्रांति के परिणामस्वरूप विभिन्न जाति-सम्प्रदायों को एक ही उद्योग में साथ-साथ काम करना होता था, जिससे जातिप्रथा एवं छुआछूत के बंधन कमजोर हुए। साथ ही औद्यओगिक क्रांति के परिणामस्वरूप लोगों में दकियानूसी प्रवृत्ति की जगह उन्मुक्त विचार पद्धति का विकास हुआ, परिणामस्वरूप सामाजिक रूढ़ीवादिता मे कमी आई।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

2) **आधुनिक शिक्षा का विकास** – औद्योगिक क्षेत्र में हुई प्रगति ने शिक्षा के क्षेत्र में भी उन्नति के मार्ग प्रशस्त कर दिए। व्यवसायिक, तकनीकी एवं प्रौद्योगिकी शिक्षा को अधिक महत्व दिया जाने लगा तथा विश्व के विभिन्न शहरों में बड़े-बड़े इंजिनीयरिंग, मेडिकल एवं प्रबंधन संबंधी शैक्षणिक संस्थानों की स्थापना हुई।

3) **महिला सशक्तिकरण** – औद्योगिक क्रांति के परिणामस्वरूप अत्यधिक श्रम की आवश्यकता हुई, जिसकी पूर्ति पुरूषों से ही न हो सकने के कारण महिलाओं को भी उद्योगों में रोजगार प्राप्त हुआ। इससे महिलाओं की आर्थिक स्थिति सुधरी एवं वे अधिक अधिकारों की मांग भी करने लगी। इस प्रकार महिला सशक्तिकरण की पृष्ठभूमि तैयार हो गई।

4) **जनसंख्या में वृद्धि** – औद्योगिक क्रांति ने जनसंख्या वृद्धि को प्रेरित किया। भौतिक संसाधनों में हुई वृद्धि से मानव का जीवन सुखपूर्ण हो गया, जिससे जन्म दर में वृद्धि हुई। उसी प्रकार स्वास्थ्य एवं चिकित्सा के क्षेत्र में हुए विकास से मृत्यु दर में कमी आई। इस प्रकार जन्म दर में वृद्धि एवं मृत्यु दर में कमी से जनसंख्या में अत्यधिक वृद्धि हुई। प्रारंभिक चरण में तो जनसंख्या वृद्धि ने औद्योगिककरण को आगे बढ़ाया, क्योंकि इससे न केवल उद्योगों को सस्ता श्रम प्राप्त हो सका, बल्कि एक बड़ा बाजार भी प्राप्त हुआ। किन्तु आगे चलकर जनसंख्या वृद्धि ने विभिन्न देशों में नवीन प्रकार की समस्याओं को जन्म दिया।

❖ **नकारात्मक**

1) **सामाजिक तनाव में वृद्धि** – औद्योगिक क्रांति ने मुख्यरूप से 3 नवीन वर्गों को जन्म दिया। प्रथम – पूंजीपति वर्ग, द्वितीय – मध्यम वर्ग, अर्थात् – इंजीनियर, वैज्ञानिक, ठेकेदार, दलाल आदि एवं तृतीय – श्रमिक वर्ग। विभिन्न वर्गों के उदय ने सामाजिक असंतुलन की स्थिति पैदा कर दी। पूंजीपति वर्ग ने आर्थिक क्षेत्र के साथ-साथ राजनीतिक क्षेत्र में भी प्रभाव स्थापित करने का प्रयास किया। मध्यम वर्ग की आर्थिक सम्पन्नता ने उन्हें अधिक अधिकारों की मांग हेतु प्रेरित किया। श्रमिक वर्ग की दयनीय स्थिति ने उन्हें श्रमिक आन्दोलनों हेतु बाध्य किया। इस प्रकार नवीन वर्गों के उदय ने एक नए प्रकार के सामाजिक तनाव को जन्म दिया।

2) **मानवीय संबंधों में गिरावट** – औद्योगिक क्रांति के परिणामस्वरूप भावनात्मक मानवीय संबंधों का स्थान आर्थिक संबंधों ने ले लिया। उद्योगों में काम न तो मालिक अपने श्रमिकों से परिचित था और न ही श्रमिक आपस में भी परिचित थे। रोजगार की प्रतिस्पर्धा ने मनुष्य के बीच मानवीय प्रेम को कम किया। इसके साथ ही उद्योगों में प्रयुक्त होने वाली मशीन और तकनीकी ने मानव को भी मशीन का एक हिस्सा बना दिया। मानव से मानव का संबंध टूट गया और वह अब मशीन से जुड़ गया। फलस्वरूप मानव में पारस्परिक प्रेम कम हुआ तथा अलगाववादी प्रवृत्ति का जन्म हुआ।

3) **संयुक्त परिवार का विघटन** – औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप संयुक्त परिवार प्रणाली को आघात पहुंचा। वस्तुतः कृषि अर्थव्यवस्था में संयुक्त परिवार प्रथा प्रचलित थी, किन्तु औद्योगीकरण के बाद व्यक्ति रोजगार की तलाश में गृहनगर से दूर अन्य क्षेत्रों में पलायन करने लगा। इससे संयुक्त परिवार प्रणाली का विघटन एवं एकल परिवार प्रणाली को बढ़ावा मिला।

4) **नैतिक मूल्यों में गिरावट** – नए औद्योगिक समाज में नैतिक मूल्यों में गिरावट आई। भौतिक प्रगति से नशाखोरी, जुआखोरी, वैश्याबृत्ति, बलात्कार, भ्रष्टाचार आदि बुराइयों को जन्म दिया। प्रेमचंद ने 'गोदान' में इस स्थिति का सजीव चित्रण किया है।

5) **शहरी जीवन में गिरावट** – शहरों में हुई जनसंख्या वृद्धि के कारण निचले तबकों के लिए आवास, भोजन, पेयजल, स्वास्थ्य आदि की पूर्ति मुशकिल हो गई, जिससे चोरी, डकैती, हत्या जैसी अपराधिक प्रवृत्तियों में वृद्धि हुई।

6) **सांस्कृतिक परिवर्तन** – औद्योगिक क्रांति से पुराने रहन-सहन के तरीकों, वेश-भूषा, रीति-रिवाज, धार्मिक मान्यता, कला-साहित्य, मनोरंजन के साधनों में परिवर्तन हुआ। होटलों, क्लबों, मदिरालयों व जुआघरों का प्रचलन बढ़ा। इस प्रकार प्राचीन सभ्यता एवं संस्कृति दूषित हुई।

7) **बालश्रम** – औद्योगिक क्रांति ने बाल-श्रम को बढ़ावा दिया और बच्चों से उनका 'बचपन' छीन लिया। इस समस्या से सारा विश्व आज भी जूझ रहा है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

- *राजनीतिक परिणाम*

❖ **सकारात्मक**

1) **प्रजातंत्र की मांग** – औद्योगिक क्रांति ने रूढ़ीवादी राजतंत्र की जगह परिवर्तन समर्थक प्रजातांत्रिक शासन प्रणाली की मांग को प्रेरित किया। राजतंत्र एवं कुलीनतंत्र के विरुद्ध पूंजीपति मध्यम वर्ग एवं श्रमिकों ने संगठित होकर प्रजातंत्र की मांग की। परिणामस्वरूप 19वीं सदी में इंग्लैण्ड में अनेक संसदीय सुधार किए गए।

2) **अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में परिवर्तन** – औद्योगिक परिणामस्वरूप अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में नवीन संबंधों का युग प्रारंभ हुआ। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अनेक आर्थिक संगठनों की स्थापना हुई, जैसे – डब्ल्यू. टी. ओ., विश्व बैंक, आई. एम. एफ., आसियान, यूरोपीय यूनियन आदि।

3) **श्रमिक आंदोलन** – श्रमिकों ने अपनी स्थिति को सुधारने के लिए संगठन स्थापित किए तथा उनके माध्यम से अपनी मांगें रखी, जैसे – काम के घंटे, वेतन–वृद्धि, शिक्षा, स्वास्थ्य आदि में सुधार। परिणामस्वरूप सरकार को श्रमिक कानून बनाने के लिए बाध्य किया। 1825 ई. में इंग्लैण्ड में श्रमिक संघों (Trade Union) को औपचारिक मान्यता प्रदान की गई। चार्टिस्ट आंदोलन के माध्यम से इंग्लैण्ड के श्रमिकों ने राजनीतिक अधिकार प्राप्त करने के प्रयास किए।

❖ **नकारात्मक**

1) **साम्राज्यवाद व उपनिवेशवाद** – औद्योगिक क्रांति ने विभिन्न राष्ट्रों को नवीन उपनिवेश स्थापित करने हेतु प्रोत्साहित किया। नवऔद्योगिक राष्ट्र जर्मन, इटली, जापान आदि भी इस प्रतिस्पर्धा में शामिल हो गए। आगे चलकर साम्राज्यवाद की इसी प्रतिस्पर्धा ने प्रथम व द्वितीय विश्वयुद्ध को जन्म दिया।

2) **लोककल्याणकारी चरित्र में परिवर्तन** – औद्योगिक क्रांति के परिणामस्वरूप विभिन्न राष्ट्रों ने साम्राज्यवाद एवं उपनिवेशवाद पर ही अपना ध्यान लगाया। राष्ट्रों के द्वारा अपने भौतिक संसाधनों का प्रयोग मुख्यत: सेना के आधुनिकीकरण में किया गया। इससे इन राष्ट्रों में शासन की लोककल्याणकारी योजनाएं प्रभावित हुई।

- **वैचारिक परिणाम**

1) **मुक्त व्यापार की विचारधारा** – एडम स्मिथ जैसे अथशास्त्रियों के प्रयासों से बाजार कारकों में राज्य की अहस्तक्षेप की नीति को प्रोत्साहन मिला। राज्य की भूमिका केवल पुलिस के रूप में ही होने की मांग की जाने लगी, जबकि बाजार की कार्यप्रणाली में मुक्त व्यापार जैसी विचारधारा को बल दिया जाने लगा।

2) **समाजवादी विचारधारा** – औद्योगिक क्रांति से कामगारों और मजदूरों की दशा जहां सोचनीय हुई, वहीं पूंजीपतियों की दशा में उत्तरोत्तर वृद्धि होती गई। पूंजीपति अपना मुनाफा और बढ़ाने के लिए श्रमिकों का शोषण करने लगे। फलत: कुछ बुद्धिजीवियों ने श्रमिकों की दशा सुधारने के लिए एक नवीन विचारधारा का प्रतिपादन किया, जिसे समाजवादी विचारधारा कहते हैं। इस विचारधारा के अनुसार उत्पादन एवं वितरण के साधनों पर किसी एक व्यक्ति का नहीं, बल्कि पूरे समाज का अधिकार होना चाहिए। इस संदर्भ में ब्रिटेन के रॉबर्ट ओवेन, फ्रांस के सेंट साइमन व लुई ब्लां जैसे विचारकों ने महत्वपूर्ण कार्य किए। आगे 1848 ई. में कार्ल मार्क्स एवं एन्जेल्स ने कम्युनिस्ट घोषणा पत्र जारी कर वैज्ञानिक समाजवाद का समर्थन तथा सर्वहारा वर्ग को क्रांति हेतु प्रेरित किया।

औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप अन्य विचार धाराएं भी अस्तित्व में आई, जैसे – उपयोगितावाद (Utilitarianism), स्वच्छंदतावाद (Romanticism), उपभोक्तावाद (Consumerism), वैश्वीकरण (Globalisation) आदि।

उपर्युक्त विवरण एवं विश्लेषण से स्पष्ट है कि औद्योगिक क्रांति ने मानव समाज के प्रत्येक स्तर को प्रभावित किया। औद्योगिक क्रांति का प्रभाव न केवल आर्थिक क्षेत्र में, बल्कि राजनीतिक, सामाजिक, वैचारिक, शैक्षणिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक आदि क्षेत्रों में भी पड़ा। वस्तुत: इन्हीं परिवर्तनों को '**क्रांति**' शब्द से संबोधित किया गया, क्योंकि औद्योगिक क्रांति का प्रभाव अर्थव्यवस्था तक सीमित न रहकर विविध क्षेत्रों में भी दिखाई दिए।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

रूसी क्रांति
Russian Revolution

1917 ई. की रूसी क्रांति बीसवीं सदी के विश्व इतिहास की सबसे महत्वपूर्ण घटना थी। रूसी क्रांति ने न केवल निरंकुश जारशाही की, बल्कि जमींदारों, सामंतों तथा पूंजीपतियों की भी सत्ता को समाप्त कर विश्व में प्रथम मजदूर व कृषकों की सत्ता स्थापित की। मार्क्स द्वारा प्रतिपादित वैज्ञानिक समाजवाद की विचारधारा को सर्वप्रथम मूर्त रूप रूसी क्रांति ने ही प्रदान किया। आगे समाजवादी विचारधारा से उपजे साम्राज्यवाद एवं उपनिवेशवाद विरोधी वातावरण ने अन्य पराधीन राष्ट्रों को भी स्वतंत्रता हेतु प्रेरित किया।

वस्तुत: कोई भी क्रांति अप्रत्याशित व अचानक घटित नहीं होती, बल्कि क्रांति के लिए पृष्ठभूमि लंबे समय से ही तैयार होती रहती है। रूसी क्रांति के पीछे भी तत्कालीन कारण के साथ-साथ कुछ दीर्घकालिक कारण भी उत्तरदायी थे।

❒ रूसी क्रांति के कारण

• *दीर्घकालिक कारण*

❖ निरंकुश एवं स्वेच्छाचारी शासन

रूस में लंबे समय से निरंकुश जारशाही का शासन था। जार इस सिद्धांत पर विश्वास करता था कि वह रूस का एकाधिपति है और संसार में किसी के प्रति उत्तरदायी नहीं है। क्रांति के समय रूस का जार निकोलस द्वितीय (1894 ई. - 1917 ई.) था। उसने प्रगतिशील प्रवृत्तियों के विरूद्ध दमन की नीति अपनाई। लोगों को किसी भी प्रकार की व्यक्तिगत स्वतंत्रता, जैसे - वाक् व अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, संघ या संगठन बनाने की स्वतंत्रता प्राप्त नहीं थी। इतना ही नहीं जार निकोलस द्वितीय की पत्नी 'जरीना' और भ्रष्ट गुरू 'रासपुतिन' भी निरंकुश शासन के पक्ष में थे। इनका जार पर गहरा प्रभाव था। रूस में यह निरंकुश शासन उस काल में मौजूद था, जब 19वीं सदी में यूरोप के अन्य देशों में महत्वपूर्ण राजनीतिक परिवर्तन हो रहे थे। अन्य यूरोपीय राष्ट्रों में राजतंत्र की जगह संवैधानिक राजतंत्र अथवा गणतंत्र की स्थापना हो रही थी तथा नागरिकों को भी कई प्रकार के अधिकार दिए जा रहे थे। ऐसी स्थिति में रूस के जारशाही की निरंकुशता जनता के लिए असहनीय हो रही थी। परिणामस्वरूप रूस में जारशाही के विरूद्ध क्रांति हुई।

❖ रूस-जापान युद्ध और 1905 ई. की क्रांति

1905 ई. में जापान के साथ हुए युद्ध में रूस की पराजय हुई थी। इस पराजय ने रूस की अपराजिता को मिथ्या साबित कर दिया, जिससे जनता अब खुलकर देश की दुरावस्था के लिए जारशाही को दोषी ठहराने लगी। इस पराजय ने रूस में जनता को पहली बार एक उदारवादी क्रांति के लिए प्रेरित किया। 22 जनवरी, 1905 ई. को रविवार के दिन सेंटपीट्र्सवर्ग की सड़कों पर मजदूरों का शांतिपूर्ण जुलूस (रूस में प्रतिनिधि सभा की स्थापना एवं कुछ उदारवादी कानून बनाने संबंधी प्रस्ताव लिए जार) के राजमहल की ओर प्रस्थान कर रहा था, किन्तु जार के सैनिकों ने निहत्थे लोगों पर आक्रमण कर 130 व्यक्तियों को मार दिया।

1905 ई. की इस 'खूनी रविवार' की घटना का रूसी इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान है। शांतिपूर्ण जुलूस पर जार के निर्मम दमन ने देशभर में जारशाही के विरूद्ध असंतोष की लहर पैदा कर दी। अत: जार निकोलस द्वितीय को प्रतिकूल परिस्थितियों में उनकी मांगों को स्वीकार करना पड़ा। जार ने 'अक्टूबर घोषणा पत्र' के माध्यम से कुछ सुधारों की घोषणा की। रूस में पहली बार पार्लियामेंट की स्थापना हुई जिसे 'ड्यूमा' कहा जाता है तथा जनता को लोकतंत्रिक स्वतंत्रता और नागरिक अधिकार प्रदान किए गए। किंतु ड्यूमा का कोई विषेष महत्व नहीं रहा, क्योंकि ड्यूमा को जार द्वार बार-बार भंग कर दिया जाता था। इस प्रकार 1917 ई. तक आते-आते जनता यह समझ चुकी थी कि जार की वास्तविक मंशा अपने निरंकुश एवं स्वेच्छाचारी शासन को बनाए रखना है। अत: जनता क्रांति के माध्यम से स्थायी परिवर्तन लाना चाहती थी।

❖ अयोग्य एवं भ्रष्ट नौकरशाही

रूस में मौजूद नौकरशाही भी वंशानुगत, अकुशल एवं भ्रष्ट थी। उच्च पदों पर कुलीन वर्ग (सामंत, जमीदार) को ही नियुक्त किया जाता था, जो स्वयं भी स्वेच्छाचारी एवं निरंकुश शासन में विश्वास रखते थे। इस भ्रष्ट एवं अयोग्य नौकरशाही ने भी जनता को क्रांति हेतु आक्रोशित किया।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

❖ सामाजिक एवं आर्थिक असमानता

रूसी समाज मुख्यत: 2 वर्गों में विभाजित था। प्रथम, विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग, जिसमें सामंत, जार के कृपापात्र व बड़े पूंजीपति थे। दूसरा, अधिकाविहीन वर्ग था, जिसमें किसान, मजदूर, मध्यम वर्ग, शिक्षक, बुद्धिजीवी आदि थे। प्रथम वर्ग संपन्न था और जार की निरंकुशता एवं स्वेच्छाचारिता का समर्थक था। उत्पादन के साधनों तथा भूमि, खान और कारखानों में इसी वर्ग का अधिकार था। यह वर्ग अपने सामाजिक-आर्थिक हितों को प्राथमिकता देता था, जबकि इसकी संपन्नता किसान और मजदूरों के परिश्रम से थी। अत: अधिकारहीन वर्गों में उच्च वर्ग के विरूद्ध घृणा का भाव व्याप्त हो गया। अंतत: इसी वर्ग संघर्ष ने क्रांति को जन्म दिया।

❖ कृषकों की दयनीय दशा

रूस एक कृषि प्रधान देश था। यहां की जनसंख्या में लगभग 80 प्रतिशत हिस्सा कृषकों का था, लेकिन उनकी स्थिति निम्न थी। यद्यपि जार अलेक्जेंडर द्वितीय द्वारा 1861 ई. में कृषिदासों (Serfdom) की मुक्ति की घोषणा की गई थी, किंतु उसके बावजूद किसानों की दशा में कोई गुणात्मक परिवर्तन नहीं आया। अभी भी 67 प्रतिशत भूमि कुलीन जमीदारों के पास एवं 13 प्रतिशत भूमि चर्च एवं धार्मिक पूजारियों के अधिकार में थी। बहुसंख्यक किसान भूमिहीन थे और इन भूमिहीनों को जमींदारों की भूमि पर बेगार (कोरबी) भी करना पड़ता था। रूस में उपजाऊ भूमि का भी अभाव था। साथ ही यहां खेती हेतु वैज्ञानिक तरीकों एवं तकनीकों का प्रयोग भी नहीं किया जाता था। इस कारण उत्पादन बहुत कम होता था। कम उत्पादन के बावजूद उन्हें अपनी उपज का एक हिस्सा जार व जमींदारों को देना पड़ता था। ऐसी स्थिति में कृषकों का विद्रोही होना स्वभाविक था।

❖ श्रमिकों की हीन दशा

रूस में औद्योगीकरण बहुत देर से 1980 ई. के दशक में प्रारंभ हुआ था। इस औद्योगीकरण के लिए पूंजी प्राय: विदेशों से आई थी। विदेशी पूंजीपतियों ने मुनाफे को प्राथमिकता दी तथा मजदूरों के हितों को नजरअंदाज किया। ग्रामीण क्षेत्रों में व्याप्त भुखमरी और बेरोजगारी से मुक्ति की तलाश में लोग शहरों की ओर उद्योगों में काम करने पहुंचे। फलत: श्रमिकों की भीड़ ने उनके परिश्रम का मूल्य कम कर दिया। न्यूनतम मजदूरी के बदले अधिकतम लेने की प्रवृत्ति उद्योगपतियों में बहुत बढ़ गई थी। श्रमिकों के लिए काम के घंटे व मजदूरी निश्चित नहीं थी, शारीरिक क्षतिपूर्ति का भी कोई प्रावधान नहीं था। श्रमिकों के आवास, सफाई, स्वास्थ्य, शिक्षा, मनोरंजन इत्यादि की कोई उचित व्यवस्था नहीं थी। श्रमिक मजदूर संघ स्थापित नहीं कर सकते थे। कुल मिलाकर उनकी दशा अत्यंत दयनीय थी और उनमें असंतोष व्याप्त था।

❖ समाजवादी विचारधारा का विकास

रूस में भी औद्योगिक क्रांति के पश्चात् समाजवादी विचारधारा का प्रसार होने लगा। फलस्वरूप Social Democratic Party (1898) तथा Socialist Revolutionary Party (1902) की स्थापना हुई। Social Democratic Party किसानों को संगठित कर क्रांति लाना चाहता थी, जबकि Socialist Revolutionary Party सर्वहारा वर्ग को क्रांति का मुख्य आधार मानती थी। कृषक को नहीं। SDP भी 1903 में लंदन में हुए सम्मेलन में दो भागों में विभाजित हो गई - '**बोल्शेविक**' जो बहुमत में था और '**मेनशेविक**' जो अल्पमत में था। इन समाजवादी दलों ने किसान और मजदूरी को संगठित कर उनके असंतोष को मुखर कर क्रांति के लिए आधार तैयार किया। मेनशेविक यद्यपि मार्क्स के सिद्धांतों में विश्वास करते थे, किन्तु साधनों में नहीं। वे क्रमिक परिवर्तन चाहते थे, जबकि बोल्शेविक क्रांतिकारी रास्ता अपनाकर मजदूरों का शासन स्थापित करना चाहता था। बोल्शेविक दल को लोकप्रिय बनाने में लेनिन (ब्लादीमिर इलिच उलियानोव) ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इसके अतिरिक्त रूस में Constitutional Democratic Party भी थी, जो संवैधानिक शासन की स्थापना में विश्वास रखते थे। कुल मिलाकर के सभी प्रमुख पार्टियां जारशाही का अंत चाहती थी।

❖ जार की रूसीकरण की नीति

रूस में रूसी, यहूदी, पोल, उजबेक, तातर आदि विभिन्न जातियों के लोग रहते थे। इन सबकी अपनी सामाजिक व सांस्कृतिक परंपरा थी। जारशाही इन जातियों को अपनी संस्कृति छोड़कर रूसीकरण हेतु मजबूर कर रही थी। जार एलेक्जेण्डर तृतीय (1881 ई. - 1894 ई.) अत्यधिक संकीर्ण विचारधारा का व्यक्ति था। उसने 'एक जार, एक चर्च और एक रूस' का नारा दिया। फलत: गैर-रूसी जातियां जारशाही की कट्टर विरोधी बन गई थीं। समाजवादी विचारधारा में जाति और नस्लभेद का कोई स्थान नहीं था, अत: गैर-रूसी जनसंख्या समाजवाद की ओर आकर्षित हुए।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

❖ **बौद्धिक कारण**

रूस में टॉल्सटॉय, तुर्गनेव, दोस्तोवयस्की जैसे उच्च कोटि के लेखकों ने बौद्धिक चेतना को बढ़ाने का महत्वपूर्ण कार्य किया। टॉल्सटॉय ने अपनी रचना 'War & Peace' में नेपोलियन द्वारा रूस पर आक्रमण और रूस में नेपोलियन के पराभव का उल्लेख किया है। इस प्रकार रूस के प्राचीन गौरव का बखान व वर्तमान दूर्दशा की तुलना कर दार्शनिकों ने जनता को क्रांति हेतु प्रेरित किया।

◆ ***तात्कालिक कारण***

❖ **प्रथम विश्वयुद्ध में रूस की भागीदारी**

जारशाही की साम्राज्यवादी महात्वाकांक्षा के कारण रूस भी अगस्त 1914 में प्रथम विश्वयुद्ध में शामिल हो गया। युद्ध के दौरान रूसी सेनाएं जर्मन सेनाओं से कई मोर्चों पर पराजित हुई। रूस में किसानों को जबरन सेना में भर्ती किया जा रहा था। सेना को उचित प्रशिक्षण, वेतन भत्ते, अस्त्र-शस्त्र, कपड़े आदि नहीं मिल पा रहे थे। लोहे और कोयले की कमी के कारण कारखाने बंद होने लगे। ऐसी स्थिति में आर्थिक रूप से जर्जर रूस पतनोन्मुख स्थिति में पहुंच गया।

रूसी सेनाओं की निरंतर पराजय से सैनिक तो क्षुब्ध थे ही किंतु रूस की जनता भी इसे राष्ट्रीय अपमान के रूप में देखने लगी थी। दैनिक उपभोग की वस्तुओं के अभाव ने आम जनता को क्षुब्ध कर दिया था। भ्रष्ट और निकम्मी नौकरशाही किसी भी प्रकार के सुधारों के प्रति उदासीन बनी रही। दरबारी षड्यंत्रों में वृद्धि होने लगी, जिसका परिणाम 1916 में रासपुतिन की हत्या के रूप में सामने आया। रासपुतिन की हत्या के बाद राजा ने युद्ध पर विचार करने के लिए बुलाई गई ड्यूमा को भंग कर दिया। रूस में पहले से लोग खाद्यान्न की समस्या से जूझ रहे थे, राजा द्वारा ड्यूमा को भंग करने से स्थिति और भी विगड़ गई। इस प्रकार प्रथम विश्वयुद्ध ने रूस में क्रांति की प्रक्रिया एवं घटनाक्रमों को तीव्र कर दिया।

❐ क्रांति के चरण

◆ **प्रथम चरण - मार्च, 1917 ई. की क्रांति**

प्रथम विश्वयुद्ध से उपजी दुर्व्यवस्था और जारशाही की अयोग्यता ने रूसी जनसंख्या को बेहाल कर रखा था। जनवरी, 1917 ई. में खूनी रविवार की 12 वीं सालगिरह के मौके पर 1.5 लाख मजदूरों ने हड़ताल की। मार्च तक प्राय: सभी प्रमुख कारखानों में हड़ताल हो गई। 7 मार्च, 1917 ई. (रूसी पंचांग के अनुसार 22 फरवरी) को पेट्रोगार्ड (सेंटपीट्र्सबर्ग) की सड़कों पर भूख और ठंड से ठिठुरते हुए मजदूरों ने रोटी की मांग के साथ जूलूस निकाला और दुकानों को लूटना आरंभ कर दिया। सेना ने भी उन पर गोली चलाने से इन्कार कर दिया और वह भी मजदूरों से जा मिली।

मजदूरों और सैनिकों ने मिलकर क्रांतिकारी सोवियत (परिषद्) का गठन कर लिया तथा शासन के वास्तविक अधिकार स्वयं ले लिए। जार ने इस अराजकता का अंत करने हेतु युद्ध स्थल से राजधानी जाने का निश्चय किया, किन्तु विद्रोही सैनिकों ने उसे स्पेषल रेलगाड़ी से विस्साव नगर भेज दिया, जहां उसको कैद कर लिया गया। 14 मार्च, 1917 ई. को पैट्रोगार्ड की सोवियत एवं ड्यूमा के बीच समझौता हुआ जिसके फलस्वरूप अस्थायी सरकार का गठन किया। प्रारंभ में इस अस्थायी सरकार का नेतृत्व C D P के नेता प्रिंसल्वाव ने संभाला किन्तु आगे समाजवादी क्रांतिकारी दल के नेता एलेक्जेंडर करेन्स्की ने अंतत: मंत्रिमंडल का गठन किया। इसी के साथ रूस में 300 वर्षों से शासन कर रहे रोमानोव राजवंश का अंत हो गया। इस प्रकार रूस में केरेन्स्की के नेतृत्व में मध्यम वर्ग की सत्ता स्थापित हुई, जबकि क्रांति की सफलता में प्रमुख योगदान मजदूरों एवं कृषकों का था।

◆ **द्वितीय चरण - नवम्बर, 1917 ई. की क्रांति**

केरेन्स्की ने नेतृत्व में बनी अस्थायी सरकार के सदस्य मुख्यत: जमींदार, उद्योगपति एवं पूंजीपति थे। इस सरकार का मुख्य उद्देश्य था - प्रजातांत्रिक सरकार की स्थापना करना, मित्रराष्ट्रों के सहयोग से युद्ध चलाना, व्यक्तिगत संपत्ति के अधिकार की रक्षा करना एवं रूस की समस्त संस्थाओं में वैधानिक उपायों द्वारा परिवर्तन लाना। परंतु बोल्शेविकों ने इस सरकार को स्वीकार नहीं किया, क्योंकि उनके अनुसार यह परिवर्तन पर्याप्त नहीं थे। अप्रैल, 1917 ई. में लेनिन स्विट्जरलैंण्ड से वापस रूस लौटा और उसने सारी सत्ता 'सोवियत' (किसान और मजदूरों के सहकारी संगठन) को शांतिपूर्वक हस्तांतरित करने का नारा दिया। लेनिन और बोल्शेविकों की मांग थी कि रूस प्रथम विश्वयुद्ध से हट जाए, उद्योगों पर मजदूरों का नियंत्रण हो और जोतने वाले को जमीन दे दी जाए।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

अस्थायी सरकार की जनविरोधी नीतियों के कारण मजदूरों, कृषकों व सैनिकों में असंतोष बढ़ने लगा। मजदूरों और सैनिकों की भीड़ों ने पेट्रोगार्ड की सड़कों पर निकलकर सारी सत्ता सोवियतों को सौंपने की मांग की, किंतु केरेन्स्की ने इन शांतिपूर्ण जुलूसों पर गोलियां चलवाई। बोल्शेविकों के नेता लेनिन ने जब देखा कि किसान, मजदूर और सैनिक क्रांति के पक्ष में हैं, तो उसने 7 नवम्बर, 1917 ई. को क्रांति की घोषणा की। इसके पश्चात् 6-7 नवम्बर, 1917 ई. की रात्रि को बोल्शेविकों ने मजदूरों, कृषकों व सैनिकों के सहयोग से पेट्रोगार्ड की सरकारी इमारतों, रेल-स्टेशनों, डाकघरों, बैंकों पर अधिकार कर लिया।

7 नवम्बर 1917 ई. को बोल्शेविकों ने जार के भूतपूर्व महल जहां अस्थायी सरकार कार्यरत थी पर आक्रमण कर अधिकार कर लिया। केरेन्स्की राजधानी छोड़ भाग खड़ा हुआ एवं अन्य मंत्रियों को बंदी बना लिया गया। उसी दिन बोल्शेविकों ने घोषणा की कि अंतरिम सरकार का शासन समाप्त कर दिया गया है और लेनिन के नेतृत्व में जन कॉमिसार (जन-मंत्रिमंडल) का गठन किया गया। लेनिन को इसका सभापति, ट्राटस्की को युद्धमंत्री तथा स्टॉलिन को विदेश मंत्री नियुक्त किया गया। इस तरह लेनिन के नेतृत्व में नवंबर 1917 ई. को रूस की बोल्शेविक क्रांति सफल हुई।

- **बोल्शेविक दल/लेनिन की सफलता के कारण**

1) **किसान एवं मजदूरों का समर्थन** - रूसी जनसंख्या में कृषकों एवं मजदूरों का बाहुल्य था। बोल्शेविकों ने इनके हितों की मांग को उठाकर इनका समर्थन प्राप्त किया था। कृषकों को भय था कि बोल्शेविकों के हारने से उनकी भूमि छिन जाएगी और जमींदारों का पुनः बोलबाला हो जाएगा। इसी तरह मजदूरों को भय था कि बोल्शेविकों की पराजय की हालत में पूंजीपतियों का अधिपत्य पुनः कारखानों पर स्थापित हो जाएगा और उनका शोषण होगा। इससे बचने के लिए किसान एवं मजदूरों ने बोल्शेविकों की पूरी मदद की।

2) **रूस का क्षेत्रीय विस्तार** - रूस जैसे विशाल देश में क्रांतिकारियों को पकड़ना और उनके संगठन को तोड़ना आसान नहीं था इसलिए जारशाही बोल्शेविकों के खिलाफ रहते हुए भी पूरे राज्य में क्रांतिकारियों को पकड़ने में अक्षम रही जिसके परिणामस्वरूप अंततः बोल्शेविकों की क्रांति सफल हुई।

3) **प्रथम विश्वयुद्ध** - बोल्शेविक क्रांति प्रथम विश्वयुद्ध के काल में हुई थी। इस कारण साम्यवादी रूस से नफरत करते हुए भी मित्रराष्ट्र उससे युद्ध नही कर सके। मित्रराष्ट्रों की युद्ध में व्यस्तता का लाभ उठाकर ट्राटस्की ने 55 लाख की 'लाल सेना' का गठन किया तथा क्रांति विरोधी राजतंत्र समर्थकों, लोकतंत्र समर्थकों एवं सैन्य अधिकारियों के विद्रोहों को कुचल दिया।

4) **सैनिकों में राष्ट्रीयता की भावना** - लाल सेना के सैनिक राष्ट्रीय भावना से ओत-प्रोत थे। रूस की प्रतिक्रियावादी ताकतों का सामना इन सैनिकों ने अच्छी तरह किया।

5) **विदेशी ऋण का भुगतान नहीं होना** - बोल्शेविकों ने घोषणा की कि उनकी सरकार विदेशी ऋण नहीं चुकाएगी। इस घोषणा से कर्जदार देशों के शासक वर्ग क्रांति के पक्ष में हो गए। अतः विदेशी लोग बोल्शेविक सरकार की सहायता करने लगे।

6) **अयोग्य क्रांतिविरोधी** - क्रांतिविरोधियों के नेता भी बड़े अयोग्य और भ्रष्ट थे, जबकि लेनिन, ट्राटस्की व स्टालिन योग्य एवं निष्ठावान थे।

❐ परिणाम/प्रभाव/महत्व

1917 ई. की रूसी क्रांति 20वीं सदी के पूर्वार्द्ध की सर्वाधिक महत्वपूर्ण घटना थी। रूसी क्रांति का प्रभाव केवल रूस तक सीमित नहीं रहा, बल्कि इसका अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर दूरगामी प्रभाव भी पड़ा। इतिहासकार एच.जी. वेल्स ने इसे 'इस्लाम के उदय के बाद सर्वाधिक महत्वपूर्ण घटना बताया'। इसी तरह प्रो. लास्की ने इसे, 'ईसा के जन्म के बाद की सबसे महत्वपूर्ण घटना माना है।' रूसी क्रांति के परिणामों को निम्नलिखित बिन्दुओं के अंतर्गत समझा जा सकता है -

- **राजनीतिक परिणाम**

1) **जारशाही की समाप्ति** - रूसी क्रांति ने निरंकुश जारशाही को सदैव के लिए समाप्त कर दिया तथा कृषकों व मजदूरों के नेतृत्व में समाजवादी शासन व्यवस्था की स्थापना की।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

2) **अनेक राजवंशों का पतन** – बोल्शेविक क्रांति ने रूस में चले आ रहे पिछले 300 वर्षों से स्थापित रोमानोव राजवंश का अंत कर दिया। इतना ही नहीं इस क्रांति की सफलता ने यूरोप में जो राजनीतिक चेतना जगी, उससे राजतंत्र विरोधी भावनाएं और अधिक प्रबल हो गई। फलत: अक्टूबर, 1918 ई. में ऑस्ट्रिया–हंगरी में हैप्सबर्ग राजवंश का खात्मा हुआ और नवंबर, 1918 ई. में जर्मनी में होहेनजोलर्न राजवंश की सत्ता समाप्त हुई। इसी तरह टर्की में युवा तुर्क आंदोलन बढ़ा जिसने 1921 ई. में खलीफा की सत्ता को समाप्त कर दिया।

3) **प्रथम विश्वयुद्ध की समाप्ति** – जब वोल्शेविक सरकार सत्ता में आई, तो उसने मार्च, 1918 ई. में जर्मनी के साथ ब्रेस्टलिटोवस्क की संधि कर स्वयं को प्रथम विश्वयुद्ध से अलग कर लिया। रूस के इस कदम से अन्य देशों की जनता ने भी अपनी सरकारों पर प्रथम विश्वयुद्ध की जल्दी समाप्ति हेतु दवाब बनाया परिणास्वरूप शीघ्र ही 11 नवम्बर, 1918 ई. को प्रथम विश्वयुद्ध समाप्त हो गया।

4) **साम्यवादी विचारधारा का प्रसार** – 1917 ई. को बोल्शेविक क्रांति की सफलता ने मार्क्सवादी विचारधारा को साकार रूप प्रदान किया। रूस में सफलता के बाद यह विचारधारा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रसारित होने लगी। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर साम्यवादी विचारधारा के प्रचार–प्रसार हेतु मार्च, 1919 ई. में मास्को में प्रथम कम्युनिस्ट इंटरनेशनल (कॉमिन्टर्न) की स्थापना की गई। इसकी स्थापना के साथ ही सोवियत साम्यवादी पार्टी ने इस बात को जाहिर कर दिया कि विश्व भर में साम्यवादी पार्टियों के साथ सोवियत सरकार भाईचारा बरतेगी। चीन के माओत्से तुंग और वियतनाम के हो–ची–मिन्ह के संदर्भ में इसे समझा जा सकता है, जो कॉमिन्टर्न द्वारा प्रोत्साहित हुए।

5) **साम्राज्यवाद के विरूद्ध नवचेतना का संचार** – बोल्शेविक क्रांति ने साम्राज्यवादी शक्तियों के विरूद्ध स्वतंत्रता आंदोलन को न केवल प्रेरित किया, बल्कि उनका खुला समर्थन भी किया। संसार की सबसे पहली साम्यवादी सरकार की स्थापना ने साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद के विरूद्ध संघर्षरत सभी देशों का मनोबल बढ़ाया। भारत सहित एशिया और अफ्रीका के लगभग सभी उपनिवेशों में सोवियत संघ को अपना स्वाभाविक मित्र और समर्थक समझा जाने लगा।

6) **विश्व का दो वैचारिक गुटों में बंटना** – बोल्शेविक क्रांति के पूर्व विश्व में राष्ट्रवाद और उपनिवेशवाद का बोलबाला था और यही विश्व की गुटबंदी का आधार था। रूस में समाजवादी सरकार की स्थापना से पूंजीवादी विचारधारा को ठेस लगी और अब इन दोनों विचारधारों के प्रसार और विरोध को लेकर विश्व प्राय: दो गुटों में विभाजित हो गया।

7) **मजदूरो एवं किसानों के आत्मविश्वास में वृद्धि** – रूसी क्रांति की सफलता में मजदूरों एवं कृषकों की सर्वप्रमुख भूमिका थी। इस क्रांति के उपरांत रूस में सर्वहारा वर्ग की साम्यवादी सरकार गठित की गई तथा भूमि का कृषकों का स्वामित्व एवं उद्योगों में मजदूर वर्ग की भागीदारी स्वीकार की गई। इससे प्रेरणा प्राप्त कर विश्वभर के मजदूरों एवं किसानों में भी आत्मविश्वास का संचार हुआ तथा उन्होंने भी शोषण से मुक्ति हेतु प्रयास किए।

8) **नागरिक स्वतंत्रता का हनन** – रूसी क्रांति की सफलता के उपरांत रूस में जिस साम्यवादी सरकार की स्थापना हुई थी. उसने यद्यपि जनता को आर्थिक एवं सामाजिक समानता दी, परंतु उन्हें राजनीतिक स्वतंत्रता से वंचित रखा गया। रूस में कम्यूनिस्ट पार्टी एकमात्र वैधानिक दल घोषित किया गया। इस पार्टी की विचारधारा के विरूद्ध भाषण, लेखन, संगठन आदि की स्वतंत्रता को समाप्त कर दिय गयाा।

- **आर्थिक परिणाम**

1) **आर्थिक समानता का जन्म** – क्रांति के पश्चात् स्थापित समाजवादी व्यवस्था के अंतर्गत उत्पादन व वितरण के साधनों पर समाज का अधिकार स्वीकार किया गया। जमींदारों से भूमि छीनकर गरीब कृषकों में बांट दी गई तथा पूंजीपति वर्ग से उद्योगों के स्वामित्व का अधिकार छीनकर मजदूरों को हस्तान्तरित कर दिया गया। इस प्रकार रूस में आर्थिक स्तर पर समानता लाने का प्रयास किया गया।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

2) **रूस का आर्थिक व औद्योगिक विकास** – निजी संपत्ति का राष्ट्रीयकरण बिना मुआवजे के किया गया। भूमि जमींदारों से छीनकर कृषकों दे दी गई तथा कारखानों पर स्वामित्व का अधिकार श्रमिकों को दिया गया। इससे कृषक एवं मजदूर अतिरिक्त उत्पादन हेतु प्रेरित हुए। 1921 ई. में नई आर्थिक नीति के परिणामस्वरूप कृषिगत व औद्योगिक उत्पादन में वृद्धि हुई। साम्यवादी सरकार ने भी विदेशों से मशीनें एवं तकनीकी खरीदकर औद्योगिक विकास हेतु महत्वपूर्ण प्रयास किए, यातायात व संचार के साधनों का विकास किया। परिणामस्वरूप रूस में औद्योगिक क्षेत्र में सकारात्मक विकास देखा गया।

3) **नियोजित अर्थव्यवस्था का विकास** – रूस ने अपने आर्थिक विकास के लिए नियोजित अर्थव्यवस्था (Planed Economy) को अपनाया तथा स्टॉलिन के अंतर्गत 2 पंचवर्षीय योजनाएं लागू की गई। फलतः आर्थिक विकास दर में तीव्र वृद्धि हुई। वस्तुतः इस आर्थिक समृद्धि के बल पर ही रूस 1929 ई. की आर्थिक मंदी के दुष्प्रभाव से बचा रहा। आगे भारत सहित अनेक देशों ने भी अपने आर्थिक विकास के लिए नियोजित अर्थव्यवस्था को अपनाया।

4) **किसान एवं मजदूरों के जीवन स्तर में सुधार** – क्रांति के पश्चात् श्रमिकों एवं किसानों के उत्थान हेतु अनेक कदम उठाए गए। प्रत्येक व्यक्ति को काम देना राज्य का कर्तव्य बन गया। इसके परिणामस्वरूप उनके जीवन स्तर में सुधार हुआ। शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार की सुनिश्चिता ने मेहनतकश वर्ग को नई स्फूर्ति प्रदान की।

- **समाजिक परिणाम**

1) **वर्गभेद की समाप्ति** – क्रांति के पश्चात् रूसी समाज में कुलीन एवं अभिजात वर्गों के विशेष अधिकार समाप्त हो गए। किसान एवं मजदूरों को सम्मानजनक स्थान प्राप्त हुआ। जन्म, लिंग, नस्ल, धर्म और जाति का भेद समाप्त कर योग्यता के आधार पर नागरिकों को राजनीतिक, समाजिक, शैक्षणिक, आर्थिक आदि क्षेत्रों में समान अवसर दिए गए।

2) **धर्मनिरपेक्षता का बढ़ावा** – क्रांति के पश्चात् रूस में सभी धर्मों को समानता का दर्जा दिया गया। राज्य का धर्म में कोई हस्तक्षेप नहीं रहा। यह प्रत्येक व्यक्ति की स्वतंत्र इच्छा पर निर्भर रहने लगा कि वह इच्छानुसार किसी भी धर्म का पालन करने लगे।

3) **शिक्षा का विकास** – क्रांति के पश्चात् शिक्षा से धर्म का नियंत्रण समाप्त हुआ। पंपरागत शिक्षा की जगह इंजीनियरिंग, मेडिकल, प्रबंधकीय, व्यवसायिक तथा समाज उपयोगी शिक्षा पर जोर दिया जाने लगा। 8वीं कक्षा तक की शिक्षा को अनिवार्य एवं निःशुल्क बना दिया गया।

4) **महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन** – रूसी महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन हुआ। अधिक से अधिक संतान पैदा करने वाली रूसी महिलाओं को विशेष रूप से सम्मानित किया जाने लगा, क्योंकि उनके इस योगदान से रूसी श्रमिक और किसानों की आबादी तेजी से बढ़ रही थी। खेत-खलिहानों में ही नहीं, बल्कि कारखानों एवं प्रयोगशालाओं में भी रूसी महिलाओं की नियुक्ति की जाने लगी। उन्हें मताधिकार, शिक्षा एवं रोजगार के क्षेत्र में पुरूषों के समकक्ष अधिकार दिए गए।

- **वैश्विक प्रभाव**

रूसी क्रांति की सफलता से विश्व में साम्यवादी विचारों का प्रसार हुआ तथा अनेक देशों में साम्यवादी सरकारें स्थापित हुई। साथ ही वैश्विक स्तर पर श्रमिकों के प्रति उदार दृष्टिकोण अपनाया जाने लगा तथा उनके अधिकारों की घोषणा की गई। इससे श्रमिकों में आत्मविश्वास जागा, जिससे वे श्रमिका संगठन की स्थापना हेतु प्रेरित हुए। इसकी परिणति I. L. O. की स्थापना के रूप में देखी जा सकती है। साथ ही रूसी क्रांति के परिणामस्वरूप वैश्विक स्तर पर आर्थिक नियोजन प्रणाली को लोकप्रियता प्राप्त हुई।

❐ निष्कर्ष

इस प्रकार रूसी क्रांति का प्रभाव न केवल रूस के संदर्भ में, बल्कि संपूर्ण विश्व के संदर्भ में देखा जा सकता है। इस क्रांति के परिणामस्वरूप पहली बार शासन सत्ता पर कुलीन या मध्यमवर्ग का नहीं, बल्कि श्रमिक व मजदूर वर्ग का अधिकार स्वीकार किया गया। उत्पादन एवं वितरण के साधनों पर सम्पूर्ण समाज के अधिकार को स्वीकार करते हुए आर्थिक समानता स्थापित करने का प्रयास किया गया। किन्तु रूसी क्रांति के परिणामों की कुछ सीमाएं भी हैं। इसने साम्यवादी निरंकुशता को स्थापित किया एवं व्यक्तिगत स्वतंत्रता का गला घोट दिया। इन सीमाओं के बावजूद रूसी क्रांति का महत्व कम नहीं होता है। वस्तुतः रूसी क्रांति ने मजदूरों, कृषकों, स्त्रियों आदि के सशक्तिकरण को आगे बढ़ाया तथा साम्राज्यवाद के विरूद्ध एक वैश्विक मनःस्थिति निर्मित की।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

❐ युद्धरत् साम्यवाद (War communise)

बोल्शेविक क्रांति के पश्चात् गृहयुद्ध के दौरान सोवियत शासन के द्वारा 1918 ई. -1921 ई. के मध्य जो नीति अपनाई गई, उसे युद्ध साम्यवाद के नाम से जाना जाता है। इस काल में साम्यवादी आदर्शों के आधार पर व्यवस्था स्थापित करने का प्रयास किया गया।

युद्ध साम्यवाद के तहत भूमि किसानों, जमींदारों से छीनकर राज्य की घोषित कर दी गई और फिर उसको किसानों में बांट दिया गया। सरकार ने किसानों से जबरन अनाज लेने की नीति अपनाई, अपने खाने लायक अनाज को छोड़कर बाकी संपूर्ण उत्पादन सरकार को देने के लिए किसान बाध्य था। अपने उत्पादन को बाजार में बेचने से रोकने के लिए श्रमजीवियों की सशस्त्र टुकड़ियों को किसानों के अनाजों को जब्त करने के लिए भेजा गया। अनाज संग्रह करने वालों को कठोर सजाऐं दी गई। गृहयुद्ध और बोल्शेविक सरकार की बलपूर्वक अनाज लेने की नीति के प्रति कृषकों के विरोध के कारण कृषि उत्पादन में भारी गिरावट आई।

उद्योगों के संबंध में भी बोल्शेविक सरकार ने कठोर नीतियां लागू की। कारखानों पर सरकारी नियंत्रण स्थापित किया गया। कारखानों का समस्त उत्पादन सारकार ने अपने नियंत्रण में लेकर जनता को अपनी ओर से माल देना आरंभ किया। इस प्रकार निजी व्यापार भी बंद हो गया। बैंकिंग प्रणाली भी अव्यवस्थित हो गई, क्योंकि सरकार ने वस्तु विनिमय प्रणाली पर बल दिया। इस समस्त कारणों से औद्योगिक विकास अवरुद्ध हुआ।

इसी प्रकार युद्ध साम्यवाद की शासन व्यवस्था को आतंक तथा स्वेच्छाचरिता से चलाया गया। इस शासन व्यवस्था में रूसी जनता को मिले कष्टों से रूस में असंतोष व्याप्त था, जो एक के बाद एक कई कृषक विद्रोहों के रूप में सामने आया। इस प्रकार गृहयुद्ध एवं विश्वयुद्ध की हानियों के कारण पहले से ही जर्जर राष्ट्र को युद्ध साम्यवाद ने और भी ज्यादा दुष्प्रभावित किया। अत: लेनिन ने स्थिति की गंभीरता को समझते हुए असंतोष के कारणों को दूर करने और रूस के आर्थिक पुनर्निमाण के लिए युद्धरत साम्यवाद के स्थान पर नई आर्थिक नीति लाई।

❐ नई आर्थिक नीति (New Economic Policy)

विदेशी हमलों और भीतरी षड्यंत्रों के कारण रूस को बड़े जबर्दस्त आर्थिक संकट का सामना करना पड़ा। 1917 ई. में लेनिन ने उत्पादन के सारे साधनों का राष्ट्रीयकरण कर दिया, किन्तु बहुत से उद्योग-धंधों में उत्पादन बढ़ने की बजाय घटने लगा, कृषि उत्पादन भी आधा ही रह गया था तथा आवश्यक वस्तुओं की भारी कमी हुई। इन भीषण परिस्थितियों से निपटने के लिए लेनिन ने 1921 ई. में एक नई आर्थिक नीति अपनाई, जिसे NEP कहा जाता है। यह आर्थिक नीति मार्क्सवादी सिद्धांतों से समझौता भी थी, क्योंकि इसमें पूंजीपतियों का भी स्थान सुरक्षित रखा गया।

- **औद्योगिक क्षेत्र में सुधार**

बोल्शेविक सरकार ने नई आर्थिक नीति में राष्ट्रीयकरण के साथ-साथ पूंजीवादी व्यवस्था को भी प्रश्रय दिया। जिन छोटे कारखानों में बीस से कम मजदूर कार्य करते थे उन इकाइयों को उनके मालिकों के हाथ में ही रहने दिया गया और पूंजीपतियों को अपने उत्पादन बेचने की भी स्वतंत्रता दी गई। इस नीति के परिणामस्वरूप रूस के उद्योग-धंधों का कायाकल्प हुआ और उत्पादन भी बढ़ा।

- **कृषि क्षेत्र में सुधार**

किसानों से उनके उपज की अनिवार्य वसूली बंद कर दी गई और उनके स्थान पर कृषि उत्पादन पर कर लिया जाने लगा। कृषकों को अपनी अतिरिक्त उपज को बाजार में बेचने एवं उससे अर्जित धन को अपने पास रखने की अनुमति दी गई। एससे निजी व्यापार का प्रचलन हुआ तथा इससे किसानों की आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ।

विदेशी व्यापार पर सरकार का नियंत्रण पूर्ववत बना रहा, किन्तु छोटे व्यापारी एवं खुदरा दुकानों पर राज्य ने नियंत्रण नहीं किया। वस्तु विनिमय के स्थान पर मुद्रा का पुन: प्रयोग किया गया। विदेशी पूंजी को आकर्षित करने के लिए सुविधाऐं दी गई। विदेशियों को खानों, यातायात के साधनों व कारखानों में धन लगाने हेतु प्रोत्साहित किया गया।

- **श्रम एवं मजदूर संघ की नीति में परिवर्तन**

युद्धरत साम्यवाद के काल में सरकार औद्योगिक श्रमिक को राशन एवं अन्य सामग्री उपलब्ध करवाती थी, लेकिन नवीन आर्थिक नीति के अंतर्गत श्रमिकों को कुछ नकद मुद्रा भी दी जाने लगी। अब जबरन काम करवाने व बराबर वेतन न देने की नीति समाप्त हो गई। 1922 ई. में श्रमिक संहिता द्वारा मजदूरों को कई लाभ दिए गए, जैसे -प्रतिदिन 8 घंटे का कार्य करना, सामाजिक बीमा लाभ आदि।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

लेनिन की नई आर्थिक आर्थिक नीति की अलोचना इस आधार पर की जाती है कि इससे धनी उद्योगपतियों तथा सम्पन्न किसानों को लाभ पहुंचा, रूस पूंजीवादी व्यवस्था अपनाने की ओर अग्रसर हुआ। आचोलकों ने इसे पूंजीवाद के आगे बोल्शेविक सरकार का समर्पण माना। यह बात सत्य है कि नई आर्थिक नीति युद्धरत साम्यवाद की नीति से भिन्न थी, क्योंकि इसके अंतर्गत कुछ अंशों में पूंजीवादी व्यवस्था को स्वीकार किया गया था, किन्तु लेनिन इसे पूंजीवाद के समक्ष बोल्शेविक सरकार का आत्मसमर्पण नहीं मानता था। उसकी दृष्टि में नई आर्थिक नीति बोल्शेविक राज्य की शक्ति और राजनीतिक नमनीयता का लक्षण मात्र थी। वस्तुतः लेनिन पक्का मार्क्सवादी था और वह इस समय यथार्थवादी नीति अपना रहा था। उसने महसूस किया था कि साम्यवाद को बचाने और शक्तिशाली ढंग से आगे बढ़ाने के लिए थोड़ा सा पूंजीवाद को अपनाना पड़ेगा।

इस संदर्भ में लेनिन ने कहा था "दो कदम आगे बढ़ाने के लिए एक कदम पीछे हटना चाहिए", अर्थात - दो कदम आगे बढ़कर एक कदम पीछे हटना, एक तरीके से एक कदम आगे रहने के बराबर है। उसका विचार था कि जब आर्थिक व्यवस्था सुधर जाए, तो सरकार पुनः साम्यवादी व्यवस्था स्थापित कर लेगी और आगे स्टालिन के समय ऐसा देखा भी गया।

'नई आर्थिक नीति' से आर्थिक क्षेत्र में स्थिरता आई, मुद्रा पद्धति का सुदृढ़ीकरण हुआ, कृषि उत्पादन और औद्योगिक उत्पादन में वृद्धि हुई। इस तरह रूस का आर्थिक विकास हुआ। इस संबंध में डेविड थामसन ने लिखा कि इस नीति के सर्वाधिक नाटकीय दूरगामी प्रभावों में एक महत्वपूर्ण प्रभाव यह था कि आर्थिक नीति के परिणामस्वरूप रूस का पुनर्निमाण संभव हुआ। लेनिन ने आर्थिक नीति के संदर्भ में जो बातें कही थीं, वह सही साबित हुई कि रूस जब आर्थिक रूप से सक्षम हो जाएगा, तो साम्यवादी व्यवस्था पूर्णतः सशक्त तरीके से स्थापित हो जाएगी। 1924 ई. में लेनिन की मृत्यु हो गई, परिणामस्वरूप 1925 ई. के बाद बोल्शेविक पार्टी ने इसका परित्याग कर दिया और कठोर साम्यवादी नीतियां लागू की।

कुल मिलाकर नई आर्थिक नीति ने प्रथम विश्वयुद्धजनित अव्यव्स्था तथा क्रांति एवं गृह-युद्ध के समय हुए विनाश से अर्थव्यवस्था को सुधारने में बड़ी मदद की।

IAS
Shaping Your Dreams

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

प्रथम एवं द्वितीय विश्वयुद्ध
World War I & II

❐ समग्र युद्ध के रूप में प्रथम विश्वयुद्ध (First world war as a total war)

प्रथम विश्वयुद्ध अपने विस्तार, स्वरूप और परिणामों की दृष्टि से, पूर्व में लड़े गए युद्धों से कई अर्थों में भिन्न था। बाल्कन क्षेत्र के मुद्दे से आरंभ हुए इस युद्ध ने शीघ्र ही विश्वव्यापी रूप धारण कर लिया। यह युद्ध यूरोप, एशिया, आफ्रीका, अटलांटिक सागर, प्रशांत महासागर आदि क्षेत्रों में लड़ा गया। विश्व के प्राय: 30 देशों ने प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से इस युद्ध में भाग लिया।

प्रथम विश्वयुद्ध पूर्व में लड़े गए युद्धों से अत्यंत विध्वंशात्मक व विनाशकारी भी था। इस युद्ध में ही सर्वप्रथम जहरीली गैसों, टैंकों, पण्डुब्बियों, बमवर्षक विमानों जैसे विनाशक अस्त्र-शस्त्रों का प्रयोग किया गया था। प्रथम विश्वयुद्ध में न केवल युद्धरत राष्ट्रों के सैनिक मारे गए थे, बल्कि सैनिकों से अधिक संख्या में नागरिकों की मृत्यु हुई थी। वस्तुत: प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान नागरिक क्षेत्र पर की गई बमबारी से तथा युद्ध के कारण फैलने वाली बिमारियों से मरने वाले लोगों की संख्या सैनिकों से कहीं ज्यादा थी।

देखा जाए तो प्रथम विश्वयुद्ध न केवल अपने विस्तार व साधनों के इस्तेमाल के संदर्भ में समग्र युद्ध था, बल्कि प्रभावों के स्तर पर भी इसे समग्र युद्ध कहा जा सकता है। इस युद्ध में जन और धन की व्यापक हानि हुई। एक अनुमान के मुताबिक इस युद्ध में लगभग 80 लाख लोग मारे गए व 2 करोड़ व्यक्ति घायल हुए। साथ ही युद्ध में लगभग 40 अरब डॉलर की संपत्ति नष्ट हुई। प्रथम विश्वयुद्ध के परिणामस्वरूप कई साम्राज्यों और राजवंशों का अंत हो गया। ऑस्ट्रिया-हंगरी के हैप्सवर्ग वंश, जर्मनी के होहनजोलर्न वंश, रूस के रोमनोव वंश तथा तुर्की से खलीफा की सत्ता का अंत हो गया। आर्थिक क्षेत्र में इसके परिणामस्वरूप विश्व को शीघ्र ही आर्थिक मंदी का सामना करना पड़ा। सामाजिक क्षेत्र में भी कई मूलभूत परिवर्तन हुए, जैसे - महिलाओं की स्थिति में सुधार हुआ, श्रमिकों की ट्रेड यूनियन की शक्ति में वृद्धि हुई तथा अल्पसंख्यकों की समस्या के समाधान के लिए भी गंभीरतापूर्वक प्रयास किए जाने लगे।

इस प्रकार प्रथम विश्वयुद्ध को उसके विस्तार, स्वरूप और परिणामों की दृष्टि से एक समग्र युद्ध की संज्ञा दी जा सकती है।

❐ प्रथम विश्वयुद्ध के कारण

प्रथम विश्वयुद्ध को अचानक घटने वाली घटना के रूप में नहीं देखा जा सकता है। औद्योगिक क्रांति के पश्चात् यूरोप में तीव्र भौतिक प्रगति हुई। अगर इस भौतिक प्रगति को राजनीतिक रूप में देखा जाए तो संगठित राज्य अस्तित्व में आए और राष्ट्रवाद जैसी विचारधारा शक्तिशाली हुई। आगे औद्योगिकरण व उग्रराष्ट्रवाद ने विभिन्न राष्ट्रों को सैन्यिकरण व साम्राज्य विस्तार हेतु प्रेरित किया। साथ ही 1870 ई. में जर्मनी और ईटली के एकीकरण के पश्चात् यूरोपीय राजनीति में कूटनीति और गुप्त संधियों का नया दौर प्रारंभ हुआ, जिसने प्रथम विश्वयुद्ध को अवश्यम्भावी बना दिया।

वस्तुत: प्रथम विश्वयुद्ध हेतु अनेक कारण उत्तरदायी थे, जिन्हें निम्नलिखित बिंदुओं के अंतर्गत् समझा जा सकता है -

- ***दीर्घकालिक कारण***
- **कूटनीतिक संधियां**

प्रथम विश्वयुद्ध का सर्वप्रमुख मौलिक कारण कूटनीतिक संधियां थीं। कूटनीतिक संधियों को शुरू करने वाला जर्मन चान्सलर बिस्मार्क था। 1871 ई. में जर्मनी के एकीकरण के क्रम में बिस्मार्क ने फ्रांस से अल्सास-लॉरेन का क्षेत्र लेकर उसे आहत कर दिया था। बिस्मार्क को सदैव भय रहता था कि फ्रांस यूरोप में दूसरे राष्ट्रों से मित्रता कर जर्मनी से बदला लेने की कोशिश करेगा, इसलिए बिस्मार्क ने यूरोपीय राजनीति से फ्रांस को अलग-थलग रखने हेतु गुप्त संधियों को अन्जाम दिया। इसी सिद्धांत के आधार पर 1882 ई. में जर्मनी, आस्ट्रियॉ व इटली ने मिलकर त्रिगुट (Triple Alliance) का निर्माण किया, जिसका उद्देश्य फ्रांस पर नजर रखना था। इस गुट के विरूद्ध 1907 ई. में इंग्लैंड, फ्रांस और रूस ने मिलकर त्रिदेशीय मैत्री संघ (Triple Entente) का निर्माण किया।

इस प्रकार यूरोप की शक्तियां दो गुटो में बंट गयी थी। यूरोप का दो विरोधी गुटों में विभाजन यूरोपीय शांति के लिए खतरनाक सिद्ध हुआ। कूटनीतिक संधियों के कारण अन्तर्राष्ट्रीय तनाव पैदा हुआ, युद्ध के वातावरण का सृजन हुआ, अन्तर्राष्ट्रीय कटुता में वृद्धि हुई और अंतत: प्रथम विश्वयुद्ध का विस्फोट हुआ।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

- **साम्राज्यवादी प्रतिस्पर्द्धा**

औद्योगिक क्रांति की सफलता के पश्चात् यूरोपीय राष्ट्रों को कच्चे माल व बाजार की प्राप्ति हेतु नवीन उपनिवेशों की आवश्यकता हुई। इसी आवश्यकता ने साम्राज्यवाद की प्रतिस्पर्धा को जन्म दिया था। 1870 ई. के पश्चात् इस प्रतिस्पर्धा में पुराने साम्राज्यवादी देशों (ब्रिटेन, फ्रांस व रूस) के अलावा तीन नए साम्राज्यवादी देश (जर्मनी, इटली व जापान) भी शामिल हो गए थे। चूंकि एशिया और अफ्रीका में पुराने साम्राज्यवादी देशों का आधिपत्य पहले ही हो गया था। परिणामत: पुराने साम्राज्यवादी देशों व नवीन साम्राज्यवादी देशों के मध्य एक बड़ा युद्ध अवश्यम्भावी था। बाल्कन क्षेत्र में रूस और ऑस्ट्रिया दोनों ही तुर्की के अधिकार को समाप्त कर अपना प्रभुत्व जमाना चाहते थे। इस कारण ऑस्ट्रिया और रूस के बीच संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हो गई, जो अंतत: प्रथम विश्वयुद्ध का कारण बनी।

- **आयुधों की होड़**

साम्राज्यवाद के इस युग में यूरोप के सभी राज्य अपनी सैनिक शक्ति बढ़ाना चाहते थे। सभी देशों में अनिवार्य सैनिक सेवा लागू थी और विध्वंशक अस्त्र-शस्त्रों की संख्या में बढ़ोतरी की जा रही थी। इसके चलते पूरे यूरोप में सैनिक वातावारण निर्मित हो गया था। ऐसे वातावरण में सैनिक अधिकारियों का स्थान देश की राजनीति में प्रमुख हो गया। ऐसी स्थिति में यूरोप में जब भी कोई संकट पैदा होता था, तो ये सैनिक अधिकारी उसका समाधान युद्ध में ही खोजते थे। इस सैन्यवाद और युद्ध मानसिकता ने प्रथम विश्वयुद्ध की स्थिति तैयार कर दी।

- **उग्रराष्ट्रवाद/विकृत राष्ट्रवाद**

फ्रांस की राज्यक्रांति द्वारा राष्ट्रीयता की भावना का जन्म हुआ था। जर्मनी और इटली का एकीकरण राष्ट्रवादी भावना का ही सकारात्मक परिणाम था, किन्तु 1870 ई. के पश्चात् यूरोप के राष्ट्रवाद ने उग्र रूप धारण कर लिया था। उग्रराष्ट्रवाद देशभक्ति की ऐसी भावना थी, जो युद्ध के बल पर अपनी सर्वोच्चता स्थापित करना चाहती थी। 1870 ई. में प्रशा से हारकर फ्रांस को अल्सास-लोरेन के प्रदेशों से हाथ धोना पड़ा था। फलत: फ्रांस राष्ट्रीय रूप से अपमानित महसूस कर रहा था तथा वह पुन: इन क्षेत्रों पर अपना अधिकार कर राष्ट्रीय भावना को संतुष्ट करना चाहता था। उसी प्रकार बाल्कन क्षेत्र में भी 1908 ई. में ऑस्ट्रिया द्वारा बोस्निया व हर्जेगोविना का अधिग्रहण कर लिया गया था, जबकि बोस्निया व हर्जेगोविना में बहुसंख्यक जनता सर्वजाति की थी तथा अपना अधिग्रहण सर्बिया में चाहती थी। अत: प्रतिक्रियास्वरूप सर्बिया के आतंकवादी संगठन कालाहाथ द्वारा 28 जून, 1914 ई. को ऑस्ट्रिया के राजकुमार फ्रांज फर्डिनेण्ड व उसकी पत्नी सोफी की हत्या कर दी गई। इसके उपरान्त 28 जुलाई, 1914 ई. को प्रथम विश्वयुद्ध प्रारंभ हो गया।

- **अन्तर्राष्ट्रीय संस्था का अभाव**

वस्तुत: प्रथमविश्वयुद्ध के पूर्व विभिन्न राष्ट्रों के मध्य विवादों के निपटारे हेतु किसी भी अन्तर्राष्ट्रीय संस्था का पूर्ण अभाव था। इससे राष्ट्रों के मध्य उपजने वाले विवादों का शांतिपूर्ण निपटारा संभव न हो सका। ऐसी स्थिति में ऑस्ट्रिया के राजकुमार की हत्या संबंधी मामले में सर्बिया की संल्पितता या असंल्पितता का विवाद शांतिपूर्ण तरीके से नहीं सुलझाया जा सका। अत: इस विवाद की परिणति प्रथम विश्वयुद्ध के रूप में देखी गई।

- **समाचार पत्रों की भूमिका**

तत्कालीन यूरोपीय राष्ट्रों से प्रकाशित होने वाले समाचार पत्रों में भी दुष्प्रचार द्वारा युद्ध का वातावरण निर्मित करने में भूमिका निभाई। प्रथम विश्वयुद्ध के पूर्व समाचारपत्रों का मुख्य विषय एक-दूसरे राष्ट्र की आलोचना करना था। इंग्लैंड के समाचार-पत्रों में जर्मनी के शासक विलियम कैंसर द्वितीय की नीतियों की अलोचना छपती थी तो जर्मनी के समाचार-पत्र जवाब में इंग्लैंड की आलोचना छापते थे। फ्रांस और जर्मनी के सामाचार पत्र एक-दूसरे के विरूद्ध आग उगलते थे। सामाचार पत्रों में छपने वाली सामग्री ने अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कटुतापूर्ण वातावरण उत्पन्न कर दिया था। राष्ट्रवाद के झूठे नारे के प्रभाव में सैनिक ही नहीं, बल्कि नागरिक भी एक-दूसरे राष्ट्र के विरूद्ध युद्ध के लिए तत्पर दिखने लगे थे। कुल मिलाकर समाचार पत्रों की भूमिका युद्ध की ओर ले जाने की थी।

- **बाल्कन क्षेत्र की समस्या**

बाल्कन क्षेत्र की समस्या ने ही त्रिपल एलाइन्स व त्रिपल एतान्त गुटों से जुड़े देशों को एक-दूसरे के सामने ला खड़ा किया था। बाल्कन प्रदेशों में मुख्यत: सर्ब जाति व स्लाव प्रजाति के लोग निवास करते थे। रूस में भी इन्हीं जाति व प्रजाति के लोग बहुसंख्यक थे। अत: रूस स्वयं को सर्ब जाति व स्लाव प्रजाति के लोगों का संरक्षक मानता था तथा इन्हें तुर्की के विरूद्ध भड़काकर बाल्कन प्रदेश

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

में अपना प्रभाव स्थापित करना चाहता था। जबकि ऑस्ट्रिया किसी तरह से सर्ब आंदोलन को कुचलकर बाल्कन प्रदेश में अपना प्रभाव बढ़ाना चाहता था। वस्तुत: फर्डिनेण्ड की हत्या संबंधी विवाद इतना अधिक नहीं बढ़ता यदि सर्बिया को रूस की सहायता का आश्वासन नहीं होता और रूस की पीठ पर फ्रांस और इंग्लैंड के समर्थन की बात नहीं होती। इसी तरह ऑस्ट्रिया भी बाल्कन क्षेत्र में अकेले युद्ध करने की हिम्मत नहीं करता यदि उसे युद्ध के समय जर्मनी और इटली का समर्थन मिलने की आशा नहीं रहती। इसलिए यहा कहा जाता है कि 'प्रथम विश्व युद्ध दो घोड़ों (सर्बिया और ऑस्ट्रिया) का युद्ध था, घुड़सवार (रूस, जर्मनी, फ्रांस, इंग्लैण्ड, अमेरिका) तो बाद में इस युद्ध में शामिल हुए।'

- **विलियम कैसर द्वितीय की महत्वाकांक्षा**

जर्मन सम्राट विलियन कैसर द्वितीय अत्यधिक महत्वाकांक्षी व्यक्ति था। उसने नौ-सेना के क्षेत्र में वृद्धि कर इंग्लैण्ड की नौ-सेना को चुनौती दी। साथ ही कैसर ने अपनी साम्राज्यवादी प्रवृत्ति से भी इंग्लैण्ड को यूरोप की राजनीति में हस्तक्षेप करने हेतु विवश किया। यही कारण है कि इंग्लैण्ड जो कि अपना मुख्य ध्यान अपने उपनिवेशों में ही केन्द्रित रखता था तथा यूरोप में अहस्तक्षेप की नीति पर आगे बढ़ रहा था। विवश होकर 1907 ई. में फ्रांस व रूस के साथ त्रिपल एतान्त में शामिल हो गया। इस प्रकार विलियम कैसर द्वितीय की महत्वाकांक्षा ने ही एक बड़े युद्ध का वातावरण निर्मित कर दिया था।

- ***तात्कालिक कारण***

ऊपर उल्लेखित कारणों से यह स्पष्ट है कि यूरोप एक बारूद के ढेर पर बैठा हुआ था, जिसमें एक चिंगारी लगने की देर थी। 28 जून, 1914 ई. को ऑस्ट्रिया के राजकुमार फर्डिनेण्ड की बोस्निया की राजधानी सेराजेवो में हत्या ने चिंगारी का काम करते हुई युद्ध का विस्फोट कर दिया।

इस प्रकार प्रथम विश्वयुद्ध के पीछे निहित कारणों की पूरी एक श्रृंखला थी, जिसमें ऊपर उल्लेखित दीर्घकालिक व तात्कालिक कारण जिम्मेदार थे।

❐ प्रथम विश्वयुद्ध की प्रक्रिया

- **सेराजेवो हत्याकाण्ड**

28 जून, 1914 ई. ऑस्ट्रिया के राजकुमार फर्डिनेण्ड व उसकी पत्नी सोफी की हत्या को ऑस्ट्रिया ने अपने राष्ट्रीय गौरव पर आघात माना तथा सर्बिया को कुचल देने का निश्चय किया।

- **ऑस्ट्रिया का अल्टिमेटम**

23 जुलाई, 1914 ई. को ऑस्ट्रिया ने सर्बिया को 48 घण्टों का अल्टिमेटम दिया कि या तो दोषियों को दण्डित किया जाए या फिर ऑस्ट्रिया की पुलिस को सर्बिया के अंदर जांच करने की अनुमति दी जाए अन्यथा वह सर्बिया पर आक्रमण हेतु विवश होगा। सर्बिया के लिए दोनों शर्तों को स्वीकार कर देना मुश्किल था, क्योंकि इससे उसकी संप्रभुता आहत होती। सर्बिया ने सम्पूर्ण मामले को हेग स्थित अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय में ले जाने तथा उसके निर्णय को स्वीकार करने की बात कही। किन्तु ऑस्ट्रिया ने इसे अस्वीकार कर दिया।

- **युद्ध का प्रारंभ**

28 जुलाई, 1914 ई. तक संतोषजनक उत्तर न मिलने की स्थिति में ऑस्ट्रिया ने सर्बिया के विरूद्ध युद्ध करने की घोषणा कर दी। सर्बिया की मदद हेतु रूस ने भी स्वयं को इस युद्ध में शामिल कर लिया। इसके उपरान्त जर्मनी ने ऑस्ट्रिया का पक्ष लेते हुए रूस के विरूद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। 1907 ई. की त्रिपल एतान्त समझौते के आधार पर फ्रांस ने रूस के पक्ष में जर्मनी के विरूद्ध व प्रतिउत्तर में जर्मनी ने फ्रांस के विरूद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। जब जर्मनी ने बेल्जियम के रास्ते फ्रांस पर आक्रमण किया तब बेल्जियम की रक्षा हेतु इंग्लैण्ड भी जर्मनी के विरूद्ध युद्ध में शामिल हो गया। आगे जब 1917 ई. में जर्मनी के यू बोटो ने लुसिटानिया नामक जहाज को डुबा दिया ,जिसमें सवार कई अमेरीकियों की मृत्यु हो गई, तब अमेरिका ने भी जर्मनी के विरूद्ध युद्ध की घोषणा कर दी।

इस प्रकार प्रथम विश्वयुद्ध में एक तरफ मित्र राष्ट्रों (इंग्लैण्ड, फ्रांस, रूस, अमेरिका, सर्बिया आदि) की सेनाओं ने भाग लिया, जबकि दूसरी तरफ त्रिपल एलाइन्स गुट के साथ-साथ बुलगारिया, टर्की आदि राष्ट्रों की सेनाऐं थी। फलत: यूरोपीय युद्ध ने एक विश्वयुद्ध का रूप ले लिया। 11 नवम्बर, 1918 ई. को 4 वर्ष 3 माह 11 दिनों तक चले इस युद्ध की समाप्ति अंतत: मित्र राष्ट्रों की विजय के साथ हुई।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

❒ प्रथम विश्वयुद्ध का उत्तरदायित्व (Responsibility for the First World War)

विश्वयुद्ध समाप्त होने के पश्चात् युद्धरत राष्ट्रों में युद्ध के दायित्व के सम्बन्ध में विवाद शुरू हो गया। इस वाद-विवाद के संदर्भ में सभी विजित व पराजित राष्ट्रों ने अपने राजकीय प्रलेखों का प्रकाशन किया, जिसमें प्रत्येक राष्ट्र ने यह सिद्ध करने का प्रयास किया कि उन्होंने शांति बनाए रखने हेतु अधिकतम प्रयास किए, किन्तु विरोधी राष्ट्रों की नीति के कारण युद्ध छिड़ गया। वार्साय की संधि की धारा 231 में जर्मनी तथा उसके मित्र राष्ट्रों को युद्ध हेतु दोषी माना गया। यहां यह प्रश्न उपस्थित होता है कि क्या जर्मनी के गुट के विपक्षी राष्ट्र एकदम दोष मुक्त थे या उनका भी कुछ दायित्व था?

नवीन साक्ष्यों तथा ऐतिहासिक ग्रंथों के निष्पक्ष अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि युद्ध के लिए हर बड़े या छोटे देश की कुछ ना कुछ जिम्मेदारी थी और एकमात्र जर्मनी को दोषी ठहराना अनुचित होगा।

◆ सर्बिया का दायित्व

सर्बिया की सरकार ने हत्या के षड्यंत्र की जानकारी होते हुए भी न तो उसे रोकने के लिए कोई प्रभावी कदम उठाए और न ही ऑस्ट्रिया को इस संबंध में कोई जानकारी दी। फिर, फर्डिनेण्ड की हत्या के उपरान्त भी सर्बिया की सरकार ने षड्यंत्रकारियों व हत्यारों के विरूद्ध कोई प्रभावी कार्यवाही नहीं की। यहां तक कि हत्या के पश्चात् जब ऑस्ट्रिया ने मांग की कि अभियुक्त की तलाश में आस्ट्रियाई अधिकारियों से सहयोग लिया जाए, तब भी सर्बिया की सरकार इसके लिए राजी नहीं हुई। इस तरह का रवैया अपनाकर सर्बिया ने प्रथम विश्वयुद्ध हेतु तात्कालिक कारण प्रस्तुत किया। इस आधार पर युद्ध के लिए उसका दायित्व बनता है।

◆ ऑस्ट्रिया का दायित्व

देखा जाए तो युद्ध आरंभ करने हेतु अन्य राष्ट्रों की अपेक्षा ऑस्ट्रिया अधिक उत्तरदायी था। ऑस्ट्रिया के विदेश मंत्री ने सर्बिया को कुचल देने हेतु जानबूझकर ऐसा अल्टिमेटम जारी किया, जिसका पालन करना संभव नहीं था। इसके साथ ही ऑस्ट्रिया ने सर्बिया की इस मांग को भी ठुकरा दिया कि इस संपूर्ण मामले को हेग स्थित अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय में ले जाया जाए। ऑस्ट्रिया ने इस संभावना को टालने हेतु कि कोई मध्यस्थ राष्ट्र बीच में नहीं आ सके, शीघ्र ही युद्ध की घोषणा कर दी। उसे आशा थी कि जर्मनी रूस को रोके रखेगा और युद्ध स्थानीय ही होगा, लेकिन उसकी यह योजना सफल नहीं हो सकी। ऑस्ट्रिया ने सर्बिया पर हमला करके रूस को उत्तेजित किया। इस आधार पर ऑस्ट्रिया युद्ध के विस्फोट हेतु दोषी हो जाता है।

◆ रूस का दायित्व

ऑस्ट्रिया व सर्बिया में संघर्ष के लिए कुछ अंशों में रूस प्रत्यक्षत: जिम्मेदार था। वह ऑस्ट्रिया के विरूद्ध सर्बिया को प्रोत्साहित करता रहा। साथ ही प्रथम विश्वयुद्ध में रूस पहला ऐसा देश था, जिसने अपनी सेना की लामबन्दी की थी। जिस समय जर्मनी ऑस्ट्रिया पर दबाव डालकर समस्या का शांतिपूर्ण समाधान खोजने का प्रयत्न कर रहा था, ठीक उसी समय रूस ने लामबन्दी की घोषणा कर दी। रूस की इस घोषणा ने जर्मनी को भी रूस के विरूद्ध युद्ध की घोषणा करने हेतु विवश कर दिया। यदि रूस सेना की लामबन्दी करने में इतनी तत्परता नहीं दिखाता, तो शायद बिना युद्ध के ही समस्या का समाधान हो जाता।

◆ फ्रांस का दायित्व

फ्रांस का दायित्व इस रूप में है कि उसने रूस को संयम बरतने की सलाह नहीं दी तथा ऑस्ट्रिया के विरूद्ध पूरा समर्थन दिया। हांलाकि फ्रांस भलि-भाँति जानता था कि ऐसा करने पर जर्मनी चुपचाप नहीं बैठेगा।

◆ ब्रिटेन का दायित्व

यद्यपि ब्रिटेन के प्रधानमंत्री सर एडवर्ड ग्रे ने शांति बनाए रखने हेतु कई प्रयास किए, किन्तु वे सब विफल रहे। फिर भी ब्रिटेन को पूर्णत: दोषमुक्त नहीं माना जा सकता है। वस्तुत: युद्ध के पूर्व यदि ब्रिटेन, जर्मनी को स्पष्ट चेतावनी दे देता कि यूरोपीय युद्ध छिड़ने पर वह फ्रांस व रूस का साथ देगा, तो जर्मनी ऑस्ट्रिया पर दबाव डालकर शांतिपूर्ण समाधान हेतु गंभीर प्रयास करता। इसके विपरीत भी यदि ब्रिटेन, फ्रांस व रूस को यह चेतावनी दे देता कि यदि वे युद्ध में उलझते हैं, तो ब्रिटेन तटस्थ रहेगा, तब भी रूस सेना की लामबन्दी के निर्णय पर सौ बार सोचता। इस प्रकार चूंकि ब्रिटेन ने भी युद्ध रोकने हेतु कोई कारगर प्रयास नहीं किए। अत: प्रथम विश्वयुद्ध हेतु वह भी दोषी साबित होता है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

- **जर्मनी का दायित्व**

प्रथम विश्वयुद्ध हेतु सर्वाधिक दोषी राष्ट्र जर्मनी को माना जाता है। वस्तुत: जर्मनी के शासक विलियम कैसर द्वितीय ने ही साम्राज्यवाद व नौसैनिक प्रतिस्पर्द्धा में ब्रिटेन को चुनौती देकर उसे 'त्रिपल एतान्त' गठित करने हेतु विवश किया था। इसके अलावा जर्मनी ने ऑस्ट्रिया को सर्बिया पर आक्रमण करने हेतु पूर्ण समर्थन दिया, जबकि वह जानता था कि सर्बिया की रक्षा हेतु रूस प्रतिबद्ध है। इस रूप में जर्मनी युद्ध हेतु जिम्मेदार ठहरता है।

इसके बावजूद यदि तत्कालीन तथ्यों पर विचार किया जाए, तो यह स्पष्ट हो जाता है कि जर्मनी ने युद्ध के प्रारंभिक वर्षों में युद्ध रोकने हेतु ईमानदारीपूर्वक प्रयत्न किए थे। आस्ट्रिया, जर्मनी का एक मित्र राष्ट्र था। फलत: जर्मनी, ऑस्ट्रिया को अकेला नहीं छोड़ सकता था। साथ ही यदि जर्मनी की भौगोलिक स्थिति पर दृष्टिपात किया जाए, तो यह स्पष्ट हो जाता है कि वह पूर्व तथा पश्चिम से अपने विरोधी राष्ट्रों क्रमश: रूस व फ्रांस से घिरा था। अत: युद्ध की स्थिति में उसे रूस के साथ-साथ फ्रांस के विरूद्ध भी युद्ध की घोषणा करनी पड़ी। फिर चूंकि फ्रांस ने अपनी पूर्वी सीमा पर मजबूत किलेबंदी कर रखी थी, जहां से उसे पराजित करना लगभग असम्भव था, इसीलिए जर्मनी ने बेल्जियम के रास्ते फ्रांस पर आक्रमण कर ब्रिटेन को भी युद्ध में शामिल कर लिया। अब चूंकि अमेरिका द्वारा सैन्य व खाद्य सामग्री की आपूर्ति मित्र राष्ट्रों को की जा रही थी। अत: जर्मनी के लिए यह जरूरी था कि वह ऐसी सामग्री से लदे जहाजों को नष्ट करें। अपने इसी प्रयास में जर्मनी ने 1917 ई. में लुसिटानिया जहाज को डुबा कर अमेरिका को भी इस युद्ध में निमंत्रण दे दिया।

निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि प्रथम विश्वयुद्ध हेतु एकमात्र दोषी राष्ट्र जर्मनी नहीं था। जर्मनी, ऑस्ट्रिया के साथ अपनी मित्रता तथा अपनी मूर्खता का शिकार हुआ। वास्तव में प्रथम विश्वयुद्ध के लिए बेल्जियम को छोड़कर सभी राष्ट्र किसी न किसी रूप में उत्तरदायी थे।

आकार IAS
Shaping Your Dreams

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS